चन्दामामा
अक्तूबर १९७६
1
रु

"आपने कहा था कि ये बड़ी आसानी से साफ किये जा सकते हैं!"
सोमानी-पिल्किंगटन्स् वॉल टाइल्स आसानी से साफ किये जा सकते हैं तथा सम्पूर्ण स्वास्थ्य-सम्मत होते हैं। तरह तरह के डिजाइनों, फीके न पड़ने वाले रंगों—जगमगाते सफेद समेत में मिलते हैं। शानदार ऐसे कि देख कर जी खुश हो जाय। हिन्दुस्तान सैनिटरीवेयर एण्ड इण्डस्ट्रीज लिमिटेड द्वारा निर्मित सैनिटरीवेयर तथा सोमा प्लम्बिंग फिक्सचर्स लिमिटेड द्वारा बने सोमा मेट्ल फिटिंग्स का बड़ी खूबसूरती के साथ सोमानी पिल्किंगटन्स् वॉल टाइल्स से मेल बैठ जाता है।
खूबसूरत स्नानगृह का प्रतीक
सोमानी-पिल्किंगटन्स् लिमिटेड
हिन्दुस्तान सैनिटरीवेयर की एक सहायक संस्था
VITREOUS
हिन्दुस्तान सैनिटरीवेयर एण्ड इण्डस्ट्रीज लिमिटेड
सोमा प्लम्बिंग फिक्सचर्स लिमिटेड
२, रेड क्रास प्लेस, कलकत्ता-७००००१
naa, SPL-7523

राम और श्याम ने कराया—
शकुंतला का राजा से मिलन

देवी! तुम हो सुंदर,
इंकार मैं करता नहीं...
पर तुम्हें पहले कभी देखा नहीं.

अंगूठी तुम्हारी नहीं मिल रही...
कहां खो गई—
याद आता नहीं.

ये रही अंगूठी जो चाहिए तुम्हें,
मछली के पेट में मिली है हमें.

मांगो,
बच्चो मांगो
अपना इनाम
पॉपिन्स
दो हमारा,
बन जाएगा काम.

हुआ सवेरा, जागे राम और श्याम
अमर चित्र कथा और पॉपिन्स
थीं बिखरी तमाम.

सुनो साथियो,
कुछ रैपर तुम जमा करो,
मनचाहे कॉमिक्स हासिल करो.

चन्दामामा के मूल्य में परिवर्तन

"**चन्दामामा**" को एक रुपये के मूल्य पर पाठकों के हाथ समर्पित करने का हमने भर सक प्रयत्न किया। अन्य पत्रिकाओं की मूल्य-वृद्धि होने पर भी हमने "**चन्दामामा**" का मूल्य नहीं बढ़ाया।

लेकिन उस स्थिति को बनाये रखना अब संभव प्रतीत नहीं होता। सब प्रकार से खर्च बढ़ते जा रहे हैं। इस कारण हमने नवंबर १९७६ के अंक से "**चन्दामामा**" का मूल्य रु. **१.२५ पैसे** करने का निश्चय किया है। मूल्यवृद्धि के साथ हम चार पृष्ठ और बढ़ा रहे हैं। "**चन्दामामा**" की पठनीय सामग्री भी और अधिक देने जा रहे हैं। इसके वास्ते हम "**चन्दामामा**" में थोड़े से छोटे-छोटे परिवर्तन कर रहे हैं। हमारा विश्वास है कि ये परिवर्तन पाठकों को पसंद आयेंगे और मूल्यवृद्धि को पाठक सहर्ष स्वीकार करेंगे।

प्रकाशक
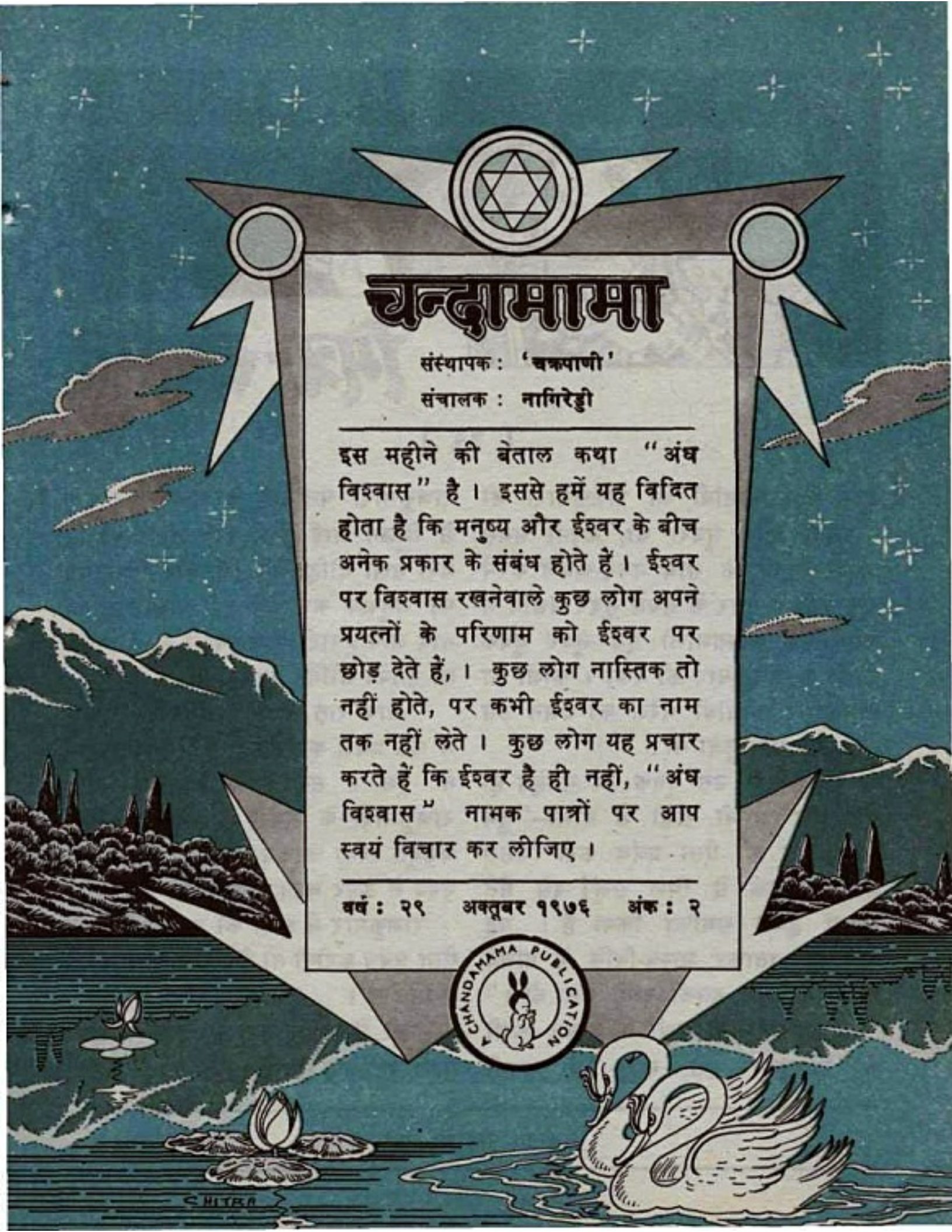
चन्दामामा के ग्राहकों को सूचना

यदि आप अपना पता बदल रहे हों, तो पांचवीं तारीख से पहिले ही अपनी ग्राहक-संख्या के साथ, अपना नया पता सूचित कीजिये। यदि विलम्ब किया गया, तो अगले मास तक हम नये पते पर 'चन्दामामा' न भेज सकेंगे।

आपके सहयोग की आशा है।

डाल्टन एजन्सीस, मद्रास-६०० ०२६

चन्दामामा
संस्थापक : 'चक्रपाणी'
संचालक : नागिरेड्डी
इस महीने की बेताल कथा "अंध विश्वास" है। इससे हमें यह विदित होता है कि मनुष्य और ईश्वर के बीच अनेक प्रकार के संबंध होते हैं। ईश्वर पर विश्वास रखनेवाले कुछ लोग अपने प्रयत्नों के परिणाम को ईश्वर पर छोड़ देते हैं, । कुछ लोग नास्तिक तो नहीं होते, पर कभी ईश्वर का नाम तक नहीं लेते । कुछ लोग यह प्रचार करते हैं कि ईश्वर है ही नहीं, "अंध विश्वास" नामक पात्रों पर आप स्वयं विचार कर लीजिए ।
वर्ष : २९ अक्तूबर १९७६ अंक : २
CHANDAMAMA PUBLICATION
CHITRA

मित्र-संप्राप्ति

[३९]

एक दिन कौशांबी की राजकुमारी जो एक अपूर्व सुंदरी थी, अपनी सबसे प्यारी सहेली के साथ नगर-भ्रमण करने चल पड़ी। नगर के सबसे सुंदर उद्यान में उसने एक शक्तिशाली एवं सुंदर युवक काशी के राजकुमार को देखा। काशी का राजकुमार कौशांबी नरेश को देखने उस नगर में आया हुआ था।

राजकुमारी उस युवक पर मोहित हो गई और अपनी सखी से बोली–"तुम आज रात को ऐसा प्रबंध करो जिससे मैं इस युवक से मिल सकूँ! इसे मैंने अपना हृदय समर्पित किया है। यह बात इसे बताकर शास्त्र-विधि से गांधर्व पद्धति पर मुझे इसकी पत्नी बना दो।"

राजकुमारी की सखी ने जाकर काशी के राजकुमार से कहा–"मैं अपनी राजकुमारी चन्द्रमति के आदेश पर आप से मिलने आई हूँ। आप को देखते ही मेरी सखी मोहित हो गई और विरहताप का अनुभव कर रही है! आज रात को यदि आप हमारी राजकुमारी से न मिलेंगे तो उनका जीवित रहना असंभव है!"

"आज रात को मैं राजकुमारी के कक्ष में कैसे प्रवेश कर सकता हूँ?" राजकुमार ने पूछा। सखी ने समझाया–"हम राजकुमारी के कमरे के गवाक्ष से एक मजबूत रस्सा लटकवा देंगी। आप उसकी मदद से ऊपर चढ़कर आ सकते हैं।"

राजकुमार ने सखी को बताया कि यदि ऐसा प्रबंध करोगी तो मैं अवश्य राजकुमारी से मिलूंगा।

सखी ने राजकुमारी के पास लौटकर सारी बातें कह सुनाईं।

अंतिम पृष्ठ का चित्र

राजकुमार अपने निवास पर लौट आया। राजकुमारी के संबंध में उसने अपने मन में यों सोचा: "यह कार्य मुझे नहीं करना चाहिए। मैं राजकुमारी के पिता का अतिथि हूँ। गुरुपुत्री, मित्र की पत्नी, अपनी पुत्री, तथा पुजारी की पत्नी के साथ मिलना ब्रह्महत्या के समान है। अपने यश और उन्नति में कलंक लगाने का कार्य किसी को कभी करना नहीं चाहिए। मैं जो कार्य करने जा रहा हूँ, वह न केवल मेरे यश में कलंक पैदा करेगा, साथ ही उस कार्य के द्वारा मेरी हानि भी हो सकती है। मुझे अपने मित्र की पुत्री को पाने से पाप भी लग सकता है। राजकुमारी अपने क्षणिक मोहावेश से कभी न कभी मुक्त हो सकती है।" यों सोचकर राजकुमारी से मिलने के लिए उस रात को नहीं गया।

उस रात को दैवाधीनम नामक व्यक्ति नगर में घूमते राजमहल की ओर पहुँचा। वहाँ पर दीवार से एक रस्सी के लटकते देख उसकी मदद से अंत:पुर में पहुँचा और राजकुमारी के कक्ष में प्रवेश किया। गहरे अंधकार में बड़ी उद्विग्नता के साथ अपने प्रियतम की प्रतीक्षा करनेवाली राजकुमारी ने दैवाधीनम को देख राजकुमार ही समझा। उसने दैवाधीनम के साथ

गाढ़ालिंगन करके कहा-"मैंने जिस क्षण तुमको देखा, तभी तुमने मेरे हृदय को लूट लिया। मैं तुम्हें छोड़ और किसी की पत्नी नहीं बन सकती! यह मेरा दृढ़ निर्णय है। तुम चुप क्यों हो?"

"देवताओं का निर्णय होकर ही रहेगा!"

यह बात सुनते ही राजकुमारी ने भाँप लिया कि उसने जिसके साथ आलिंगन किया और विवाह करने की शपथ की, वह युवक राजकुमार नहीं बल्कि दैवाधीनम है। यह रहस्य प्रकट होते ही उसने रस्सी की मदद से दैवाधीनम को नीचे भेज दिया और रस्सी को ऊपर खींच लिया।

राजमहल से निकलकर दैवाधीनम एक उजड़े मंदिर में पहुँचा और वहाँ पर सो गया। उस मंदिर में एक राजभट ने एक वैश्या के साथ मिलने का पहले ही प्रबंध कर रखा था। उसने दैवाधीनम को जगाया और पूछा–"तुम कौन हो?"

"देवताओं का निर्णय होकर ही रहेगा।" दैवाधीनम ने उत्तर दिया। इस उत्तर को सुनकर राजभट ने भाँप लिया कि वह व्यक्ति कौन है! उसने दैवाधीनम को समझाया–"तुम इस उजड़े हुए मंदिर में क्यों सोते हो? मेरे घर जाकर मजे से मेरे बिस्तर पर लेट जाओ। मुझे तो रात-भर पहरा देना है।" इन शब्दों के साथ राजभट ने दैवाधीनम को अपने घर का रास्ता बताया।

राजभट के घर पहुंचकर दैवाधीनम ने भूल से राजभट की पुत्री के कमरे में प्रवेश किया और उसके पलंग के निकट पहुँचा।

उस युवती का नाम विनयवती था। वह अत्यंत सुंदरी थी। वह बहुत दिन पहले ही युक्त वयस्का हो गई थी, पर उसका विवाह न हुआ था। क्योंकि उसने जिस युवक के साथ प्यार करके विवाह करना चाहा, वह गरीब था, इसलिए उसके पिता ने इस विवाह के लिए अपनी सम्मति नहीं दी।

इसलिए उस युवती ने सोचा था कि जब उसके पिता घर पर न होगा, तब अपने प्रियतम को अपने घर बुलवाकर उसके साथ गांधर्व विधि से विवाह कर ले और बाद को अपने पिता को भी इस विवाह के लिए मनवा ले। इस पूर्व योजना के अनुसार वह युवक विनयवती के घर पहुँच रहा था। उसने रास्ते में राजभट और दैवाधीनम का वार्तालाप सुना। साथ ही उसके देखते-देखते दैवाधीनम राजभट के घर की ओर चल पड़ा। इस पर विनयवती का प्रेमी यह सोचकर अपने घर की ओर वापस चल पड़ा कि उनकी योजना राजभट पर प्रकट हो गई है और उसे बन्दी बनाने के लिए किसी को अपने घर भेज रहा है। (और है)

माया सरोवर

[९]

[जंगली हाथियों को भगाने के बाद मगर-मच्छ की आकृतिवाला चरकाचारी की खोज में चल पड़ा। अजगर के मुँह में फँसे चरकाचारी को जयशील ने बचाया और उससे बात कर ही रहा था, तभी मगर-मच्छ की आकृतिवाला वहाँ पर आ पहुँचा। उसे देखते ही जयशील ने म्यान से तलवार निकाली, सिद्ध साधक ने दण्ड उठाया। बाद-]

जयशील और सिद्ध साधक निर्भय खड़े होकर जब मगर-मच्छ की आकृतिवाले का सामना करने को तैयार हो गये, तब वह चौंक पड़ा। उसने सोचा कि अपनी आकृति, और अपने हाथ के शूल को देख वे दोनों डर के मारे भाग जायेंगे, पर ऐसा न हुआ।

मगर-मच्छ की आकृतिवाले ने शूल उठाकर उच्च स्वर में गरजकर पूछा- "तुम दोनों कौन हो? इस भयंकर जंगल में तुम्हारा क्या काम है?"

जयशील ने अपने म्यान से तलवार खींचकर कहा-"मगर-मच्छ के चमड़े को ढकनेवाली तुम्हारी आकृति को देख मुझे हँसी आती है। मुझे जो सवाल पूछने थे, वे तुम मुझसे पूछते हो? लेकिन मुझे यह बताओ, तुम कौन हो? इस जंगल में किस काम से आये हो? तुम जिस हाथी पर

दोनों वीरों के साथ समझौता कर लेना कहीं उत्तम है! लगता है कि चरकाचारी अजगर को इलाज के काम के वास्ते पकड़ने जाकर मुसीबत में फँस गये हैं।"

वीरनारायण की बातें सुनने के बाद ही मगर-मच्छ की आकृतिवाले ने चरकाचारी की ओर ध्यान से देखा। चरकाचारी तब तक खड़े हो जाने की कोशिश करते हुए कराह रहा था। उसके बाजू में सर कटा अजगर छटपटा रहा था। इसे देख पल भर के लिए मगर-मच्छ की आकृतिवाला चकित हो बोला—"चरकाचारी, मेरा इलाज करने के लिए अजगर को पकड़ने जाकर आफ़त में फँस गये हो? तुम अगर चाहते तो हाथियों तक को निगलनेवाले बड़े-बड़े अजगरों को अपने शूल में चुभोकर ला देता!"

चरकाचारी कुछ कहने को हुआ। पर उसके कंठ से बोल न फूटे, हाँफते हुए वह पेड़ के तने के सहारे खड़ा हो गया, हाथ उठाकर जयशील तथा सिद्ध साधक की ओर उसने संकेत किया।

मगर-मच्छ की आकृतिवाले ने उन दोनों की ओर आँखें लाल-पीली करके पूछा—"तुम दोनों अभी तक यहीं हो? यदि ज़िंदा रहना चाहते हो तो मेरी दृष्टि और शूल की परिधि से दूर भाग जाओ।"

सवार हो, लगता है उस पर भी तुमने कोई विचित्र खोल पहना दी है! यह स्वांग क्यों रचते हो?"

"अरे दुष्ट! तुझ जैसे एक कमबख्त मानव मुझे धिक्कारता है? इसे मैं सहन नहीं कर सकता।" इन शब्दों के साथ मगर-मच्छ की आकृतिवाला जलग्रह को हाँकने को हुआ, तभी उसकी पूँछ पकड़कर काँपनेवाला वीरनारायण हिम्मत बटोरकर मगर-मच्छ की आकृतिवाले के शूल को अपने दोनों हाथों से कसकर बोला—"मगर मच्छ साहब! थोड़ा ठहर जाओ! तुम चाहे महान वीर क्यों न हो, बगल में धंसी तलवार की बात मत भूलो! उन

इसके तुरंत बाद जयशील ने तलवार उठाकर एक क़दम आगे बढ़ाया। इसे देख वीरनारायण चिल्लाकर जयशील से बोला–"हे वीरवर! इस मगर-मच्छ साहब के साथ तलवार के साथ युद्ध करने का मतलब एक असहाय व्यक्ति की हत्या करने के समान है। अलावा इसके इनकी बगल में धंसी तलवार को आपने क्या देख लिया? यदि उसे तुरंत बाहर न निकाला जाय तो इनका खून जम जाएगा और ये यहीं पर मर जायेंगे।"

"सुनो, इस व्यक्ति का इतनी आसानी के साथ मर जाना मुझे कदापि पसंद नहीं है। शायद तुम नहीं जानते कि इसकी बगल में जो टूटी तलवार धंसी हुई है, उसका दूसरा हिस्सा राजा कनकाक्ष के पास सुरक्षित है।" जयशील ने जवाब दिया।

जयशील की बात पूरी न हो पाई थी कि मगर-मच्छ की आकृतिवाले ने हुंकार करके शूल ऊपर उठाया और कहा–"अबे, तब तो तुम जानते हो कि मैं कौन हूँ?"

"हाँ, हाँ, क्यों नहीं? अच्छी तरह से जानता हूँ! जंगल में राजकुमार तथा राजकुमारी का अपहरण करनेवाले हो तुम! तुम्हारी बगल में जो टूटी तलवार धंसी हुई है, वह राजकुमार कांचनवर्मा की है।" जयशील ने उत्तर दिया।

"हमारे ये सारे रहस्य जाननेवाले तुम्हारा ज़िंदा रहना ठीक नहीं!" मगर

मच्छ की आकृतिवाले ने इन शब्दों के साथ अपने वाहन को ललकारकर आगे बढ़ाना चाहा, तभी बगल में बैठे वीरनारायण ने शूल को अपने दोनों हाथों से कसकर पकड़ लिया और कहा–"मगर-मच्छ साहब! आप क्रोध में आ जायेंगे तो रक्तचाप की बीमारी बढ़ जाएगी जो जान के लिए खतरा पैदा कर देगी।" परंतु मगर-मच्छवाला शूल को खींचने लगा। इस खींचातानी में वीरनारायण जलग्रह के ऊपर से शूल के साथ नीचे गिर पड़ा।

उसी क्षण मौक़ा पाकर जयशील बिजली की भाँति जलग्रह पर उछल पड़ा। पीछे से मगर-मच्छवाले की गर्दन पकड़ ली। इस बीच सिद्ध साधक ने नीचे गिरे शूल को अपने हाथ में लेकर चिल्लाकर कहा–"जय महाकाल!"

इस प्रकार आँख झपकने की देरी के भीतर मगर-मच्छवाला न केवल अपना शूल खो बैठा, बल्कि वे हथियार वह शत्रु के हाथ में आ गया। जयशील ने तलवार की नोक उसकी गर्दन पर टिकाकर ललकारा–"अबे! सीधे ढंग से तुम अपना नाम और पूरा परिचय दो। मेरी शरण में आ जाओ! वरना तुम्हारी गर्दन उड़ा दूंगा।"

मगर-मच्छ की आकृतिवाला पल भर के लिए निश्चेष्ट हुआ, फिर संभलकर बोला–"अरे मानव! मैं तुम्हारे साहस पर मुग्ध हूँ!"

यह उत्तर सुनकर सिद्ध साधक ठहाके मारकर बोला–"जयशील के साहस की प्रशंसा करने की जरूरत तुम जैसे कमबख्त के द्वारा नहीं है! साक्षात् उस महाकाल ने ही उस पर प्रसन्न हो यह तलवार दी है।"

"क्या कहा? महाकाल? सो कैसे?" मगर-मच्छ की आकृतिवाले ने आश्चर्य में आकर पूछा।

जयशील ने उसकी गर्दन पकड़कर ज़ोर से हिला दी और कहा–"अरे मगर-मच्छ का चमड़ा धारण करनेवाले दुष्ट! वह तो

एक बड़ी राम कहानी है! मेरे सवाल का तुमने कोई उत्तर नहीं दिया, तुम्हारा नाम क्या है? तुम आत्म समर्पण करके चुपचाप मेरे साथ हिरण्यपुर के राजा के पास चले आओ और उनके बच्चों का रहस्य बता दो। वरना तुम्हारा अंत कर दूंगा।"

"मेरा नाम मकर केतु है! राजा के बच्चों का रहस्य बताने के लिए राजा के पास जाने की क्या जरूरत है? वह रहस्य यहीं पर तुम्हें बता देता हूं।" मकर केतु ने कहा।

जयशील को इस बात पर यकीन नहीं हुआ कि मकर केतु इतनी सरलता के साथ युवराजा और युवरानी का रहस्य बता देगा। उसने सोचा कि इसमें कोई राज है। फिर भी इसे किसी भी हालत में राजा के पास ले जाना ही उचित समझा। जयशील ने सोचा कि राजा और मंत्री इससे सवाल करके सच्ची बात उसके मुंह से निकलवा लेंगे......

जयशील ने यों सोचकर मकर केतु से कहा—"मकर केतु! तुम अपने हाथी को हिरण्यपुर की ओर मोड़ लो! रास्ते में कहीं तुमने भाग जाने का प्रयत्न किया तो एक ही वार में तुम्हारी गर्दन उड़ा दूंगा!"

मकर केतु ने चुपचाप अपने जलग्रह को हांककर पीछे की ओर मोड़ दिया। सिद्ध साधक जल्दी-जल्दी हाथी के पास पहुँचकर बोला—"जयशील! मैं भी चलता हूँ, थोड़ा हाथ का सहारा देकर मुझे हाथी पर खींच लो।"

जयशील ने सिद्ध साधक को हाथी पर खींच लिया। हाथी चलने को था, तभी बीरनारायण और चरकाचारी चिल्ला उठे—"महाशयो! रुक जाइए! यहाँ से हमारा गाँव थोड़ी ही दूर पर है। हमें वहाँ पर पहुँचना है तो इस भयंकर जंगल को पार करना होगा! रास्ते में हाथी, भेड़िये और बाघ होंगे।"

"तुम लोगों की जान का कोई डर नहीं है। तुम दोनों इस दुष्ट का इलाज़

करने के प्रयत्न में थे, इसलिए यह हमारे हाथों में आ गया। जंगल के पार करने तक हाथी को धीरे से चलायेंगे। तुम दोनों पीछे पैदल चलकर आ जाओ।" जयशील ने समझाया।

इसके बाद सब लोग हिरण्यपुर की ओर चल पड़े। चार-पांच मिनट के बाद चरकाचारी बोला–"जयशील महाराज! हमारा आप से एक निवेदन है!"

जयशील ने विस्मय में आकर पूछा–"कहो, क्या बात है?"

"मैं और यह वीरनारायण सवेरे से इस मगर-मच्छ की आकृतिवाले का इलाज कराने के लिए परेशान थे। यदि कोई दूसरा आदमी होता तो इतनी लंबी तलवार के बगल में चुभ जाने पर मिनटों में मर जाता, मगर लगता है कि यह आदमी उस टूटी तलवार को अपने बदन में अब तक एक आभूषण की भांति पहने हुए है। मैंने उसकी नाड़ी की जांच की। उसके बदन में शीतल रक्त बह रहा है, यह कोई जल का प्राणी मालूम होता है।" चरकाचारी ने कहा।

"इसका मतलब है कि यह जल तथा जल के बाहर भी जीनेवाले किसी मेंढक जैसा प्राणी होगा! राजा कनकाक्ष के साथ जब इसका कार्य संपन्न होगा, तब इसे तथा इसके वाहन को भी तुम लोगों को पुरस्कार के रूप में दिलाऊँगा। चरकाचारी, तब जाकर तुम इस पर खोज कर सकते हो!" जयशील ने कहा।

यह वार्तालाप सुनकर मकर केतु ने दाँत किटकिटाये। जयशील ने उसके कंठ पर तलवार की नोक को टिकाकर कहा–"अबे मकर केतु! तुमने दुस्साहस करने की कोशिश की तो तुम्हारी गर्दन धड़ से अलग हो जाएगी! खबरदार!"

"ओह! जयशीलजी! उस दिन रात को श्मशान में भूत के सवार हुए श्मशान के उस पहरेदार का सिर तुम्हारी तलवार के वार से कटकर नाच उठा था! वह

दृश्य कैसा अपूर्व था!" उत्साह में आकर सिद्ध साधक शूल को घुमाते हुए बोला।

हाथी के पीछे पैदल चलकर आनेवाला वीरनारायण चरकाचारी की ओर क्रुद्ध दृष्टि से देख बोला—"चरकाचारीजी! आप जो निवेदन करना चाहते थे, उस बात को भूल इस कमबख्त मकर केतु के शारीरिक तत्वों का जिक्र कर रहे हैं।"

"हाँ, हाँ, भाई, तुम ठीक कहते हो!" इन शब्दों के साथ चरकाचारी ने दाँत दबाये फिर जयशील से कहा—"जयशील महान! मैं आप से जो निवेदन करना चाहता था, वह बात ही भूल गया। आज सवेरे से इस मगर-मच्छ की आकृतिवाले को लेकर मैं तथा वीरनारायण हम दोनों बहुत ही परेशान रहें। हमने तो अब तक शस्त्र-चिकित्सा करके इसकी बगल में धंसी तलवार को नहीं निकाला। फिर भी हमारे श्रम के महत्व को देखते हुए उचित सलाह के हेतु पर्याप्त मेहनताना दिलवा दीजिए।"

जयशील मुस्कुराकर इसका जवाब देने को था, तभी बगल में स्थित एक विशाल वृक्ष की शाखाओं में से एक तीर आकर मकर केतु की भुजा में धंस गया। तीर के लगते ही मकर केतु पीड़ा के मारे कराहकर बोला—"जयशील! यह तो बड़ा ही अन्याय है! मैं तुम्हारे सामने हार

खाकर तुम्हारी आज्ञा का पालन कर रहा था, ऐसी हालत में क्या तुम मुझ पर शूल का प्रहार करते हो?"

अचानक मकर केतु के कंधे पर तीर के धंसते देख जयशील और सिद्ध साधक भी चौंक पड़े। जयशील ने सिर उठाकर पेड़ की शाखाओं में देखा। तभी एक व्यक्ति मुस्कुराते हुए बोला–"अबे मगर-मच्छ! मैंने जिस जंगली मुर्गे को मारा था, उसे क्या तुम हड़पकर ले जाते हो? तुम भूत नहीं हो, मनुष्य ही हो! यह बात मुझ पर प्रकट हो गई! लो, यह तीर तुम्हारे कलेजे में धंसने जा रहा है!"

जयशील तथा सिद्ध साधक ने भी उस कंठ को पहचान लिया। वह व्यक्ति और कोई न था, बहेलिया भीमदास था। इस पर सिद्ध साधक ने मंत्र दण्ड ऊपर उठाकर कहा–"अबे बहेलिये भीमदास! तुमने फिर एक तीर चलाया तो तुम को महाकाल का आहार बना डालूंगा। पेड़ से उतर आ जाओ।"

"कौन है? राजा के मांत्रिक हैं?" बहेलिया भीमदास चौंककर बोल उठा।

"मैं मांत्रिक सिद्ध साधक ही हूँ। तुम चुपचाप पेड़ से उतर आओगे या मंत्र का प्रयोग करके वहीं पर तुम्हें भस्म कर डालूँ?" सिद्ध साधक ने चेतावनी दी।

"मुझ पर बाण चलानेवाला व्यक्ति वह कमबख्त बहेलिया है। ओह! आज महान माया सरोवरेश्वर के दास की कैसी दुर्दशा हो गई है! मैं अभी उसे पेड़ के साथ जलग्रह के द्वारा नीचे गिराकर उसकी हड्डी-पसली तुड़वा देता हूँ।" इन शब्दों के साथ मकर केतु ने जलग्रह को उकसा दिया।

जयशील रोकने ही जा रहा था कि इसी बीच जलग्रह घींकार करके आगे बढ़ा। बहेलिये के बैठे उस पेड़ को अपने सर से टकरा दिया, तब अपनी सूँड से पेड़ को जड़ सहित उखाड़ दिया। पेड़ की डालों पर बैठा बहेलिया भीमदास डोलते हुए आर्तनाद करने लगा। (और है)

अंध विश्वास

हठी विक्रमार्क पेड़ के पास लौट आया। पेड़ से शव उतारकर कंधे पर डाल सदा की भाँति चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगा, तब शव में स्थित बेताल ने कहा—"राजन, तुम्हारी लगन को देखने से ऐसा लगता है कि भगवान के प्रति तुम्हारा विश्वास अटल है। अतिसार जैसे व्यक्ति भगवान के प्रति द्वेष रखते हैं। आखिर वे अपने हित की रक्षा तक न कर सकने की हालत में कटी पतंग की भाँति हो जाते हैं। वे अपनी स्थिरता तक को खो बैठते हैं। तुम्हें श्रम को भुलाने के लिए मैं अतिसार की कहानी सुनाता हूँ। सुनो!"

बेताल यों सुनाने लगा: पाटलीपुत्र के अनेक व्यापारियों में अतिसार भी एक था। वह अकेला था। भाग्य पर तो उसका विश्वास था, पर भगवान के प्रति उसका विश्वास न था। वह कहा करता

बेताल कथाएँ
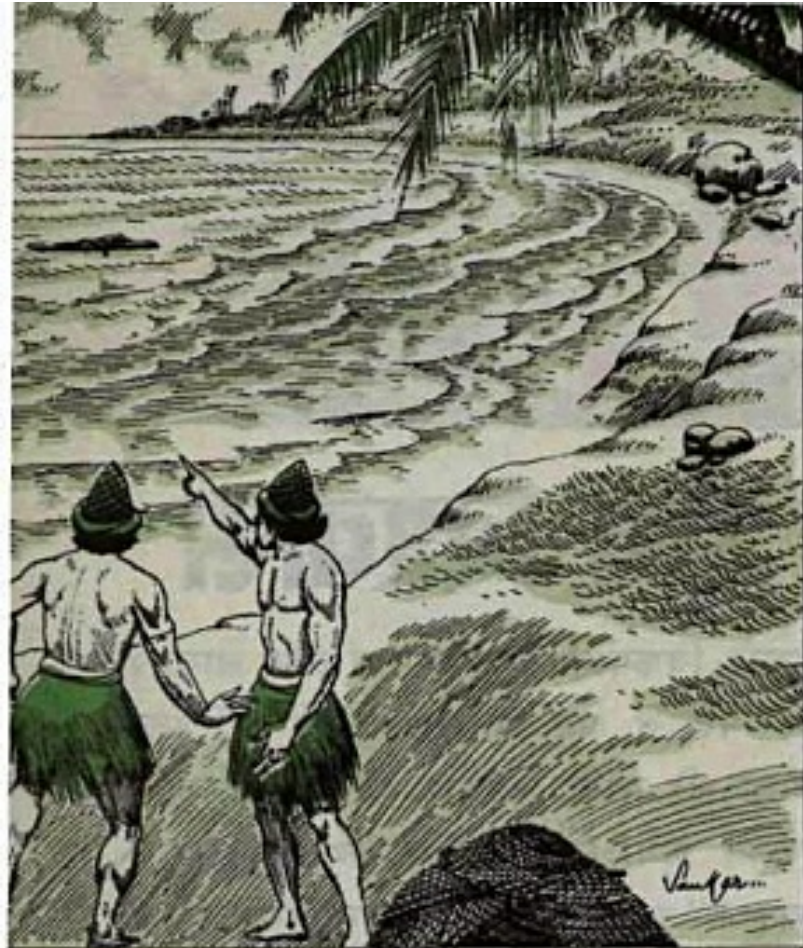
था कि जो भाग्य में लिखा हुआ है, वह होकर ही रहेगा, केवल प्रार्थना करने मात्र से भगवान प्रारंब्ध से बचा नहीं सकते! इसलिए वह कभी मंदिरों में न जाता। उसके पास जो कुछ धन था, उस पूंजी को लगाकर व्यापार करता। व्यापार में वह कभी धोखा न देता था।

एक बार वह विदेशों में जानेवाले व्यापारियों के साथ एक नौका पर अपना माल लेकर चल पड़ा। बीच समुद्र में नौका प्रवेश करते ही आंधी उठी और नौका में बैठे व्यापारियों के सामने खतरा पैदा हुआ। उस वक़्त सभी व्यापारी भगवान से प्रार्थना करने लगे कि वे उनके जान व माल की रक्षा करें। मगर अकेला अतिसार ही निर्लिप्त भाव से बैठा रहा।

इसे देख अन्य व्यापारियों ने सोचा– "इस नास्तिक के कारण ही हम सब खतरे में फंस गये हैं। इसका पिंड़ छुड़ाने पर ही हम लोग खतरे से बच सकते हैं।" यों सोचकर सबने अतिसार को लकड़ी के एक तख्ते से बांध दिया और उसे समुद्र में फेंक दिया। इसके बाद नाव के साथ सभी व्यापारी समुद्र में डूबकर मर गये।

अतिसार बेहोशी की हालत में लकड़ी के तख्ते के साथ बहकर मणिद्वीप के किनारे जा लगा। समीप में स्थित मछुओं ने सोचा कि यह कोई राजकुमार है और उसे अपने राजा रत्नकेतु के पास ले गये।

राजा ने अतिसार के मुंह से नाव के डूबने का समाचार जानकर उसे पाटलीपुत्र को भेजना चाहा, पर अतिसार ने निवेदन किया–"महाराज, पाटलीपुत्र में मेरे अपना कोई नहीं है। इस वक़्त में कंगाल हूं। आप कृपया अपने यहां कोई नौकरी दीजिए, मैं यहीं पर रह जाऊंगा।"

राजा अतिसार के व्यवहार पर बड़ा प्रसन्न हुआ और उसको अपने अंतरंग सलाहकार के रूप में नियुक्त किया। वास्तव में राजा रत्नकेतु बड़ा ही ईश्वर भक्त था। अतिसार को भगवान के प्रति

विश्वास न देख राजा को आश्चर्य हुआ। एक दिन राजा ने अतिसार से पूछा– "समस्त प्राणियों के लिए आधारभूत भगवान के प्रति तुम द्वेष क्यों करते हो?"

अतिसार ने कहा–"महाराज, मेरे मन में कोई इच्छा, आकांक्षा और भय नहीं हैं। में कभी पाप नहीं करता। किसी को धोखा-दगा न देता। हो सके तो में दूसरों की मदद ही करूँगा। में किस कामना और डर से भगवान की आराधना करूँ?"

राजा कोई जवाब न दे पाया। एक दिन राजा रत्नकेतु दरबार में जा रहा था, तब पीछे से अतिसार ने कहा–"महाराज, रुक जाइए; मैं भी आ रहा हूँ।"

राजा रुक गया। उस वक़्त थोड़ी ही दूर पर स्थित मण्डप का मुख द्वार टूटकर गिर पड़ा। भगवान ने राजा के प्राणों की रक्षा की थी। इस विचार से राजा ने उस दिन नगर के सभी मंदिरों के देवताओं की पूजा व अचनाएँ करवाईं।

राजा रोज अपने आराध्य देवता के मंदिर में जाया करता था। एक दिन राजा अतिसार को अपने साथ ले गया। राजा तो मंदिर के भीतर चला गया, लेकिन अतिसार मंदिर के बाहर ही रुक गया।

राजा जब भगवान का ध्यान कर रहा था तब न मालूम अंगरक्षक के मन में

कैसे दुर्बुद्धि पैदा हुई, उसने अपने म्यान से तलवार निकाली और राजा को मारने को हुआ। इसे देख अतिसार ने झट से अपनी छुरी निकालकर अंगरक्षक पर फेंक दिया। अंगरक्षक चीखकर नीचे गिर पड़ा। इसे देख राजा चकित रह गया, पर अतिसार ने राजा को वास्तविक समाचार सुनाया।

राजा ने एक और बार भगवान के समक्ष साष्टांग दण्डवत करके अतिसार से कहा–"भगवान की लीला को देख रहे हो न? इस घटना को देखने के बाद भी सही भगवान के प्रति तुम्हारे मन में विश्वास पैदा नहीं हो रहा है? तुम ईश्वर के प्रति द्वेष भाव को बदल लो।"

पर अतिसार ने राजा के प्रश्न का कोई उत्तर नहीं दिया। लेकिन दूसरे ही दिन वह राजा से अनुमति लेकर पाटलीपुत्र जाने का उचित प्रबंध करवाकर चला गया।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा– "राजन, अतिसार भगवान के प्रनि द्वेष भाव क्यों रखता है? राजा रत्नकेतु के समझाने के बाद भी उसने अपना विचार क्यों नहीं बदल डाला? राजा ने तो उसका बड़ा उपकार किया था, फिर भी वह राजा के दरबार की नौकरी को छोड़ क्यों चला गया? एक समय पाटलीपुत्र उसके लिए निवास योग्य न था, अब फिर से वह उसके लिए क्यों उपयुक्त लगा? इस संदेह का समाधान जानते हुए भी न दोगे तो तुम्हारा सिर टुकड़े-टुकड़े हो जाएगा।"

इस पर विक्रमार्क ने उत्तर दिया– अतिसार को ईश्वर का द्वेषी मानने के लिए कोई आधार नहीं मिलता। उसके मन में ईश्वर के प्रति अंध भक्ति नहीं है। जो लोग भगवान के प्रति अंध विश्वास रखते हैं, वे उस वक़्त भगवान की पूजा करते हैं जब उनका उपकार होता है। मगर जब उनका अहित होता है तब वे अन्य मानवों को दण्ड देते हैं। पाटलीपुत्र के व्यापारियों ने विपत्ति के समय अतिसार का अहित ही तो किया था? यदि भविष्य में राजा इसी प्रकार विपत्ति में फँस जाये तो अतिसार खतरे में पड़ सकता है न? एक बार बिना सोचे और दूसरी बार अपनी विवेकशीलता के बल पर उसने राजा के प्राणों की रक्षा की थी। दोनों बार राजा ने भगवान के प्रति कृतज्ञता प्रकट की, पर अतिसार के प्रति नहीं। इसी कारण अतिसार ने भगवान के प्रति अंध भक्ति रखनेवालों के साथ रहने में भय का अनुभव किया और पाटलीपुत्र को जाने का संकल्प किया।"

राजा के इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ गायब हो पुन: पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)

सच्चा मानव

बात बहुत पुरानी है। कल्पक राज्य पर राजा कदंबसेन शासन करता था। कदंबसेन अत्यंत योग्य व्यक्ति था। देश समृद्ध था। जनता सभ्य और शांति प्रिय थी। इस कारण अन्य देशों के राजा कल्पक राज्य की उन्नति पर जलते हुए भी कदंबसेन के नाम से डरते थे।

उन्हीं दिनों में राजा कदंबसेन के अंगरक्षक का देहांत हो गया। इस पर पड़ोसी राज्यों में यह खबर फैल गई कि कोई समर्थ और विश्वासपात्र व्यक्ति मिल जाय तो राजा उसे अपना अंगरक्षक नियुक्त करेगा। इसलिए उस पद को पाने के लिए कई व्यक्ति कल्पक राज्य में आ पहुँचे और राज्य की सीमा पर स्थित सराय में ठहर गये।

उन व्यक्तियों में दण्डपाणि और धूमकेतु नामक युवक अंगरक्षक के पद के लिए योग्य प्रतीत हुए। उन दोनों युवकों में भी दण्डपाणि अत्यंत तेज, शक्तिशाली और साहसी प्रतीत हुआ।

धूमकेतु ने भांप लिया कि दण्डपाणि सब प्रकार से उसकी अपेक्षा योग्य है, इसलिए राजा के अंगरक्षक बनने का मौक़ा उसे हाथ न लगेगा, इस कारण उसने दण्डपाणि को हटाने के लिए सोच-समझकर एक उपाय किया।

उसने दण्डपाणि से कहा—"दोस्त! इस नगर में मेरे जान-पहचानवाले अधिक संख्या में हैं। मैं उन लोगों से मिलकर दो-चार दिनों में लौट आऊंगा। लेकिन इस बीच मेरी खोज में मेरे घर से कोई आवे तो उन्हें मेरे कुशल-क्षेम बताकर उनके हाथ कृपया यह चिट्ठी दे दो।" इन शब्दों के साथ उसने दण्डपाणि के हाथ में एक चिट्ठी दी।

विमल वर्मा

इसके बाद धूमकेतु सीधे राजमहल में गया। राजा से मिलकर निवेदन किया–"महाराज, में आप को सावधान करने आया हूं। आप के राज्य की पूर्वी सीमा पर स्थित सराय में एक विदेशी गुप्तचर पहुँच गया है, उसका नाम दण्डपाणि है। वह आप का अंगरक्षक बनने की कोशिश में है। आप को केवल मेरी बात पर यक़ीन करने की ज़रूरत नहीं; मेरे कहे मुताबिक़ करेंगे तो आपको स्वयं वास्तविक समाचार मालूम हो जाएगा। इसके बाद आप जो उचित समझें, वह निर्णय ले सकते हैं।" इन शब्दों के साथ धूमकेतु ने राजा को कोई उपाय बताया।

राजा कदंबसेन ने रात को अपने सैनिकों को भेजकर सराय के चारों तरफ़ पहरा बिठाया। थोड़ी देर में एक अश्वारोही उधर से आया, सराय में प्रवेश करके दण्डपाणि से मिला और धूमकेतु के बारे में दरियाफ़्त किया। दण्डपाणि ने धूमकेतु के द्वारा दी गई चिट्ठी उस अश्वारोही के हाथ दी। दूसरे ही क्षण सैनिकों ने आकर वह चिट्ठी ले ली और दण्डपाणि को घेर लिया। मौक़ा पाकर अश्वारोही सराय से खिसक गया और अपने घोड़े पर भाग गया। वह व्यक्ति धूमकेतु के द्वारा नियुक्त किया गया था।

सैनिक चिट्ठी के साथ दण्डपाणि को भी राजा के पास ले गये।

उस चिट्ठी में गुप्त लिपि में यों लिखा हुआ था कि दण्डपाणि सकुशल वहाँ पहुँच गया है। राजा के अंगरक्षक का पद उसे मिलने की संभावना है। हो सके तो और अनेक समाचारों का शीघ्र ही संग्रह करके भेज देगा।

राजा कदंबसेन को अब स्पष्ट मालूम हो गया कि दण्डपाणि शत्रु राजा का एक गुप्तचर है। इस पर नाराज़ हो राजा ने उसे आजीवन कारागार की सजा सुनाई। दण्डपाणि को कारागार में डाल दिया गया। तब जाकर उसे मालूम

हुआ कि धूमकेतु ने उसके साथ कैसा दगा किया है?

इसके बाद राजा कदंबसेन ने धूमकेतु की सहायता की प्रशंसा की और उसी क्षण उसे अपना अंगरक्षक नियुक्त किया।

थोड़े दिन बीत गये। एक दिन धूमकेतु राजा के गुप्त कक्ष में पहुंचा। राजा के पार्श्व में एक पात्र में कोई पीने का पदार्थ था। राजा से वार्तालाप करते हुए धूमकेतु ने बड़ी चालाकी के साथ अपनी अंगूठी में छिपाये गये चूर्ण को पान-पात्र में डाल दिया।

इसके थोड़ी देर बाद राजा उस पात्र को उठाकर पीने को हुआ, तभी अचानक कहीं से दण्डपाणि आ धमका और राजा के हाथ से उस पात्र को खींचते हुए बोला– "महाराज, उसमें ज़हर मिला हुआ है। आप कृपया न पीजियेगा।"

"ज़हर? किसने मिलाया है?" राजा ने आश्चर्यपूर्वक पूछा।

"और कौन है? आप के अंगरक्षक ने ही। चाहे तो उसकी अंगूठी की जांच कीजिए!" दण्डपाणि ने बताया।

परीक्षा करने पर यह साबित हुआ कि पान-पात्र में ज़हर मिलाया गया है। राजा ने उसी वक़्त धूमकेतु को मृत्यु दण्ड की सजा सुनाई। सैनिक धूमकेतु को वहां

से ले गये, तब राजा ने दण्डपाणि से पूछा– "तुम कारागार से कैसे बचकर निकल आये? तुम्हें यह कैसे मालूम हुआ कि धूमकेतु मुझे ज़हर देनेवाला है? क्या तुम विदेशी गुप्तचर नहीं हो?"

"महाराज! मैं कारागार से बचकर निकल आया हूं। मैं शत्रु राजा का गुप्तचर हूं। धूमकेतु को आप को ज़हर देने की प्रेरणा भी मैंने ही दी है।" दण्डपाणि ने कहा।

राजा कदंबसेन विस्मय में आकर बोला– "यह सब मुझे कुछ विचित्र-सा मालूम हो रहा है। तुम मुझे मार डालना चाहते थे तो फिर बचाया ही क्यों?"

दण्डपाणि ने कहा–"महाराज! सारी बातें में साफ़-साफ़ बता रहा हूँ। सुनिये! राज्य का लोभ रखनेवाले कलिंग राजा ने आप का वध करने के लिए मुझे भेजा है। में आप के यहाँ अंगरक्षक का पद पाने के लिए आया हुआ हूँ। मगर आप का राज्य तथा आप की शासन-व्यवस्था को देख में मुग्ध हो गया हूँ। तब मुझे लगा कि ऐसे अच्छे राज्य को मेरे राजा को दिलाने से बढ़कर दूसरा अन्याय कोई न होगा। मैंने अपने राज्य को वापस लौटन का निश्चय किया। इस बीच धूमकेतु ने एक छोटी-सी नौकरी के वास्ते मेरे साथ दगा किया। ऐसा व्यक्ति भविष्य में किसी बड़े प्रलोभन में आकर आप के प्राणों के लिए खतरा पैदा कर सकता है। इसे साबित करने के लिए मैंने यह छोटा-सा नाटक रचा। मैंने ऐसा अभिनय किया कि में धूमकेतु का हितैषी बन गया हूँ। उसी की मदद से मैं कारागार से मुक्त हुआ। मैंने उसे इस बात के लिए उकसाया कि वह आप पर विष का प्रयोग करके अपने पतन का गड्ढा स्वयं खोद ले। मेरा प्रयत्न सफल हो गया। यदि मेरे इस व्यवहार में कोई दोष हो तो आप मुझे उचित दण्ड दीजिए।"

दण्डपाणि के इस कथन से राजा ने भली भाँति समझ लिया कि वह एक ईमानदार व्यक्ति है। राजा ने उठकर उसके साथ आलिंगन किया और कहा–"मैं आज से तुम को अपने अंगरक्षक ही नहीं, बल्कि अंतरंग सलाहकार के रूप में भी नियुक्त कर रहा हूँ।"

इस पर दण्डपाणि ने सविनय निवेदन किया–"महाराज, आप मुझे क्षमा कर दीजिए! में आप के यहाँ इस पद को प्राप्त कर कलिंग राजा के प्रति विश्वासघात नहीं कर सकता। में जिस काम से आया था, उसे पूरा न कर पाया, इस वजह से मैं पुनः कलिंग राजा के यहाँ जा नहीं सकता। किसी और देश में जाकर अपनी जीविका का कोई नया मार्ग ढूंढ लूंगा।" यों कहकर दण्डपाणि वहाँ से चला गया।

सुंदर मकान

रामेश और सोमलता नामक दंपति बहुत दिनों से एक सुंदर मकान बनवाना चाहते थे।

बड़ी मेहनत करके उस दंपति ने रुपये जोड़कर और एक नामी राज मिस्त्री को बुलवाकर कहा–"देखो, तुम ऐसा सुंदर मकान हमारे लिए बनवा देना जो इस गाँव भर में किसी का न हो।"

मिस्त्री ने मकान के ख़र्च का हिसाब लगाया, आधी रक़म अग्रिम लेकर काम शुरू किया और जल्दी ही एक ख़ूबसूरत मकान बनवाकर दिया।

उसे देख पड़ोसी दंपति के मन में ईर्ष्या पैदा हुई। क्योंकि रामेश के मकान के बाजू में उनकी झोंपड़ी भद्दी लग रही थी। उन लोगों ने भी बढ़िया मकान बनवाना चाहा। पड़ोसिन ने अपने सारे गहने बेच दिये।

इसके बाद उस दंपति ने मिस्त्री को बुलवाकर कहा कि रामेश के मकान से भी बढ़िया मकान बनवाकर दे। दो-चार महीने में पड़ोसी का मकान बनकर तैयार हो गया। तब वे दोनों यह सोचकर प्रसन्न हुए कि गाँव भर में वे ही दो मकान सब से सुंदर हैं।

लेकिन चार-पाँच महीनों के बाद उस गाँव में उन दो मकानों से सुंदर मकान बनकर तैयार हुआ। वह राज-मिस्त्री का नया मकान था।

राजकुमारी लवंगलता

पूर्वी समुद्र के बीच सुवर्ण द्वीप नामक एक टापू था। उसके राजा धीमान की पुत्री लवंगलता न केवल सुंदर थी, बल्कि नृत्य, संगीत, चित्रकला और इंद्रजाल विद्या में भी निपुण थी। जब वह विवाह के योग्य हुई तब राजा धीमान के सर पर चिंता सवार हो गई।

राजा धीमान ने लवंगलता के स्वयंवर का प्रबंध किया। अनेक देशों के राजा और राजकुमार भी उस स्वयंवर में आये, पर लवंगलता ने उनमें से किसी को पसंद नहीं किया। इस पर राजा धीमान ने विस्मय में आकर राजकुमारी से पूछा—"इतने सारे राजा और राजकुमारों में से क्या तुम्हें एक भी पसंद न आये? तुम अपने मन की बात साफ़-साफ़ बतला दो।"

इस पर राजकुमारी लजाते हुए बोली—"कहा जाता है कि रत्न द्वीप का राजा शशांक सुंदर, साहसी और बुद्धिमान हैं। मेरी सभी सहेलियों का यही विचार है कि शशांक ही मेरे लिए योग्य वर है।"

"यह बात तुम पहले ही बतला देती!" ये शब्द कहकर राजा ने मंत्री के साथ मंत्रणा की। सुवर्ण द्वीप से रत्न द्वीप पहुंचने में समुद्री मार्ग से हो आने में तीन महीने लगते थे।

मंत्री ने सलाह दी—"इस विवाह के संबंध में शशांक का विचार जानने के लिए हम उनके पास एक दूत को भेज देंगे। दूत के हाथ हम राजकुमारी का चित्र तथा डाकवाले कबूतर भी भेज देंगे जिससे हमें शशांक का विचार शीघ्र ही मालूम हो जाएगा।"

मंत्री के सुझाव के अनुसार राजा धीमान की ओर से एक दूत उपहारों के साथ रत्न द्वीप के लिए चल पड़ा। उसके

रवाना होने के पचास दिन बाद कबूतर समाचार ले आये। वह समाचार यह था कि राजा शशांक राजकीय कार्यों में व्यस्त है, इसलिए उसका सुवर्ण द्वीप में आना फिलहाल संभव नहीं है, यदि लवंगलता रत्न द्वीप में आ सकती है तो उचित निर्णय किया जा सकता है।

वधू को वर के यहाँ विवाह के पूर्व भेजना रीति-रिवाज के विरुद्ध था, फिर भी राजा धीमान अपनी पुत्री के वास्ते उस नियम को तोड़ने के लिए तैयार हो गया। राजा ने एक बड़ी नाव का प्रबंध कराया, उसमें अमूल्य उपहार भरवा दिये, और राजकुमारी लवंगलता के साथ अपने पुरोहित को भी रत्न द्वीप भेज दिया।

यात्रा सुखपूर्वक चलती ररी। एक महीना बीत गया। रत्न द्वीप निकट आ गया था। तभी एक दिन रात को उस नाव को समुद्री डाकुओं ने घेर लिया। सुवर्ण द्वीप के भटों ने साहस के साथ उनका सामना किया, फिर भी कोई फ़ायदा न रहा। समुद्री युद्ध में कुशलता प्राप्त डाकू एक-एक करके नौका पर आने लगे।

लवंगलता ने ख़तरे को भाँप लिया, उसने सारे शरीर में काला रंग पोत लिया। अपने लंबे केशों को काट लिया।
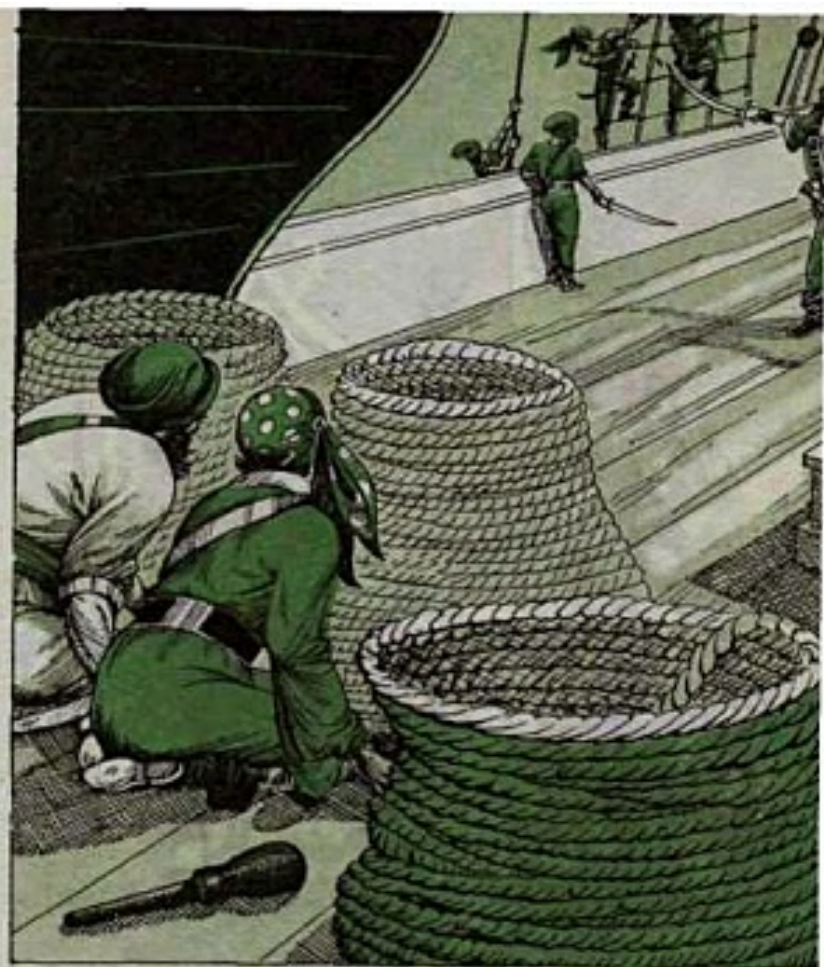
उसने जो रंग पोत लिया था, वह पंद्रह दिन तक छूटनेवाला न था। इसके बाद नाविक की पोशाकें पहन लीं। फिर राज गुरु के साथ वह भी रस्सों के ढेर के पीछे छुप गई। समुद्री डाकुओं ने नाव को लूट लिया, नाव से निकलते वक़्त नौका के निचले भाग में एक छेद बनाया, तब वे भाग गये। नाव समुद्र में डूब गई।

नाव पर एक छोटी-सी डोंगी थी। नाव में रहनेवाले प्रायः सभी लोग मर गये थे, पर दो नाविक बेहोशी की हालत में जीवित थे। उनके होश में आने पर लवंगलता और राजपुरोहित उस डोंगी पर सवार हुए। नाव के डूब जाने पर डोंगी

समुद्री जल पर तिरने लगी। नाविक उसे चलाते हुए तीन दिन बाद रत्न द्वीप पहुँचे।

लवंगलता और राजगुरु अपने दो नाविकों को साथ ले राजधानी में जा रहे थे। रास्ते में राजा की धोबिन से उनकी मुलाक़ात हुई। उनका पूरा समाचार जानकर धोबिन ने उन्हें अपने घर आने का निमंत्रण दिया और कहा कि उनके कार्य के पूरा होने तक वे उसी के घर रहे। लवंगलता ने धोबिन के निमंत्रण को स्वीकार कर लिया।

उसी दिन राजगुरु ने रत्न द्वीप के राजा शशांक से मिलकर लवंगलता के आने का समाचार दिया। शशांक ने एक पालकी भेजकर लवंगलता को राजमहल में बुलवा लिया। धोबिन ने अपने यहाँ के बढ़िया वस्त्र राजकुमारी को दिये। उन वस्त्रों को धारण कर लवंगलता शशांक को देखने गई। पर शशांक लवंगलता को देख विमुख हो गया। इस बात पर वह यक़ीन न कर पाया कि राजवंश में ऐसे काले-कलूटे लोग भी पैदा हो सकते हैं। उसे कोई दगाबाजिन समझकर वापस भेज दिया। लवंगलता निराश हो धोबिन के घर लौट गई।

धोबिन ने राजकुमारी को सांत्वना दी। धोबिन एक मालिन को जानती थी। उसके पास केशों को शीघ्र बढ़ानेवाला एक तेल था। पंद्रह दिनों में लवंगलता का कालापन दूर किया जा सकता था और उसके केश भी बढ़ाये जा सकते थे।

राजमहल के लिए फूल मालाएँ तैयार करनेवाली सुरमा ने पंद्रह दिन तक लवंगलता का पोषण किया और उसे पहले की भाँति तैयार किया। मगर उसे राजा शशांक के यहाँ कैसे भेजा जाय? यही सवाल था।

इसके लिए लवंगलता ने एक उपाय किया। वह फूल मालाएं गूंथने में बड़ी कुशल थी। उसने राजा शशांक के वास्ते एक विशेष प्रकार की माला तैयार की

और सुरमा के द्वारा उसे राजा के पास भेज दिया। उसे देख शशांक आश्चर्य में आ गया और बोला–"आज तक तुमने कभी ऐसी सुंदर माला नहीं गूँथी है।"

"महाराज! यह माला मैंने नहीं गूँथी! इसे एक युवती ने विशेष रूप से आप के वास्ते गूँथी है। इसको आप ही को धारण करना होगा।" सुरमा ने कहा।

"यह माला तैयार करनेवाली युवती को क्या तुम मेरे पास भेज सकती हो? वह यह माला कैसे गूँथती है? मैं देखना चाहता हूँ।" राजा ने जिज्ञासा प्रकट की।

"महाराज! आप निराश हो जायेंगे। वह युवती एक थाल में से फूल लेकर आप का नाम लेते हुए उन पर फूंक लगायेगी, तब उन फूलों को एक पात्र में डालकर उसमें से एक माला बाहर निकालती है। इस प्रकार तैयार करनेवाली मालाएँ केवल आप के वास्ते ही होती हैं।" सुरमा ने कहा।

"यह तो बड़ी ही आश्चर्य की बात है! मैं उस युवती को एक बार ज़रूर देखना चाहूँगा। क्या तुम उसे एक दिन बुला ला सकती हो?" राजा शशांक ने पूछा।

सुरमा ने घर लौटकर लवंगलता से कहा–"राजकुमारी, मेरी चाल चल निकली।" इसके बाद लवंगलता ने चमेली के फूल मंगवाये, उनमें से आधे

फूल लेकर एक माला गूँथ ली। बाक़ी फूलों को एक थाली में रख दिये। इसके बाद माला को बायीं हथेली पर रखकर उस पर फूलों की थाली इस तरह रख दी जिससे माला दिखाई न पड़े। तब राजमहल की ओर चल पड़ी। उस वक़्त राजकुमारी ने वे ही वस्त्र धारण किये थे जो पालकी में राजमहल में जाते पहन चुकी थी।

लवंगलता की ओर शशांक ने इस प्रकार दृष्टि दौड़ाई, मानो वह उसे पसंद आ गई। लवंगलता ने भी अपनी राजसी वृत्ति के साथ वार्तालाप किया।

"तुम मालाएं कैसे गूंथती हो, दिखाओ तो सही?" शशांक ने पूछा।

"मालाओं की सृष्टि करने की शक्ति मुझमें नहीं है, लेकिन भगवान ही मेरे वास्ते मालाएँ तैयार करते हैं। यह भी केवल उस व्यक्ति की माँग पर जिसे मैं हृदय से चाहती हूँ।" लवंगलता ने उत्तर दिया।

"क्या तुम मेरे वास्ते एक माला तैयार न कर सकोगी?" शशांक के मंत्री ने पूछा।

"क्षमा कीजिएगा। यह मुझसे नहीं हो सकेगा। भगवान मेरे हृदय को जानते हैं। वे उसी व्यक्ति के वास्ते माला की सृष्टि करते हैं जिसे मैं हृदय से प्यार करती हूँ।" लवंगलता ने उत्तर दिया।

"तो क्या तुम मुझे हृदय से प्यार करती हो?" शशांक ने पूछा।

"यह तो भगवान का निर्णय है। यह गलत कैसे हो सकता है?" लवंगलता ने कहा।

"तब तो तुम साबित करो कि यह भगवान का निर्णय है।" शशांक ने कहा।

इस पर लवंगलता ने अपने बायें हाथ की फूलों की थाली शशांक को दिखाई। उसमें चमेली के फूल थे जो गुँथे हुए न थे। इसके बाद लवंगलता ने शशांक से कहकर एक बड़ा चाँदी का पात्र मँगवाया। थाली में से फूल उसमें गिराते हुए थाली के नीचे गुप्त रूप से छिपाई गई माला को भी उस पात्र में गिरा दिया।

इसके बाद पात्र में अन्य फूलों के साथ माला भी दिखाई दी। लवंगलता ने उस माला को निकालकर झट से शशांक के कंठ में पहना दिया। शशांक ने उसे देख मन में कहा—"चित्र की अपेक्षा यह युवती ज्यादा सुंदर है।"

फिर प्रकट रूप में बोला—"इन बचे हुए फूलों का क्या होगा?"

"महाराज! आप क्षण-भर रुक जाय तो मैं इनकी माला गूँथ दूँगी।" सुरमा बोली।

सुरमा के माला गूँथने पर उस माला को शशांक ने लवंगलता के कंठ में पहना दिया।

१७७. सिकंदर की मूर्ति

ई. पू. चौथी शताब्दी में सिकंदर एशिया पर विजय प्राप्त करने के लिए रवाना हो लिबिया के सिवा नखलिस्थान को आया। उस वक्त सिरीस नगर के नागरिकों ने सिकंदर के पास अपने प्रतिनिधियों को भेजकर अपनी अधीनता की शपथ ली। उस सिकंदर की वह अपूर्व मूर्ति सिरीस नगर के पास उपलब्ध हुई है।
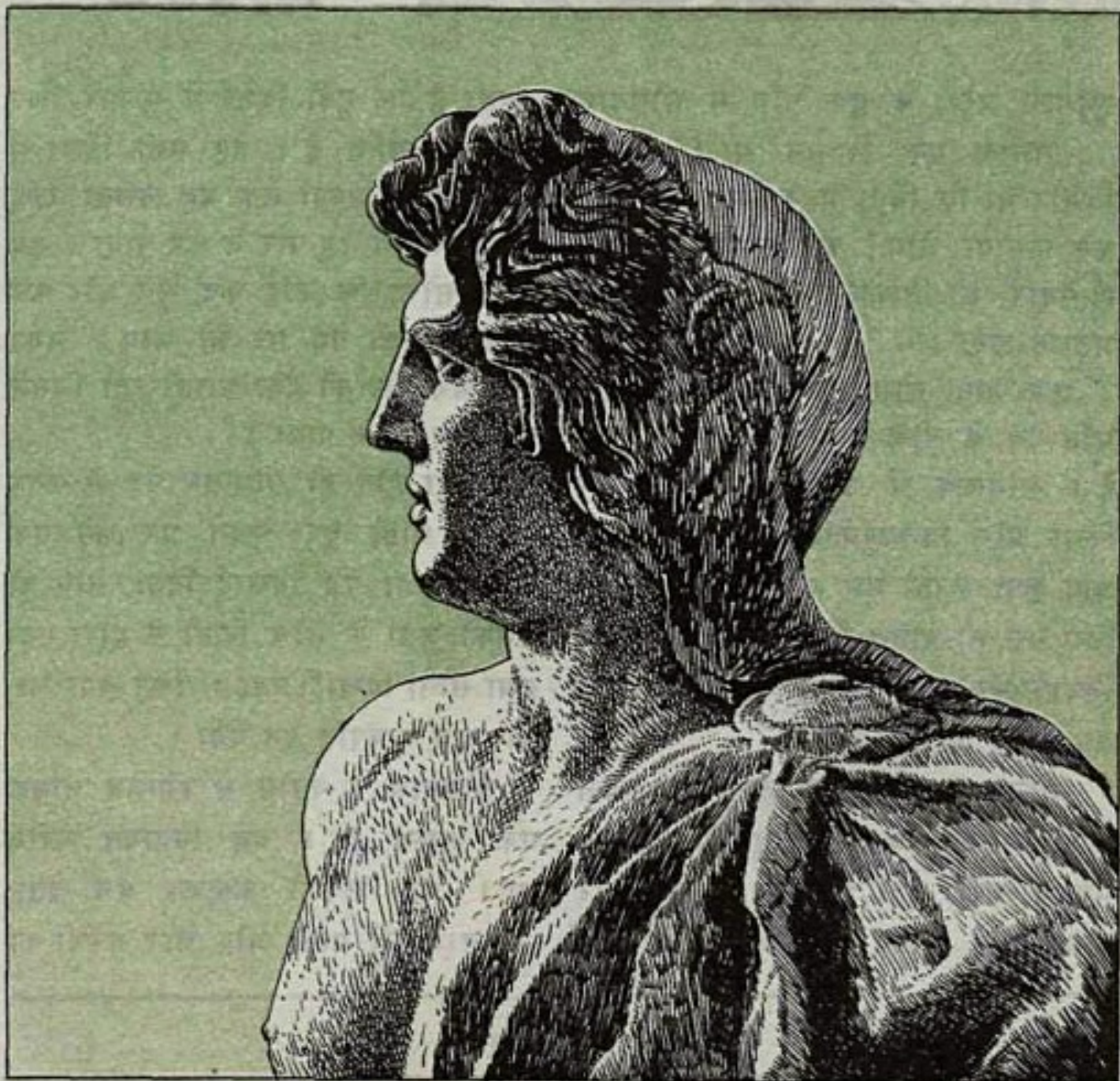
प्रारब्ध

जंगली प्रदेश के एक गाँव में सोमनाथ नामक एक किसान था। उसका विचार था कि बिना मेहनत-मशक्कत किये धन कमाया जाय! इस ख्याल से उसने खेतीबारी को तिलांजली दी और जंगल में भटकने लगा।

एक जगह सोमनाथ ने देखा कि एक मुनि पेड़ के नीचे ध्यान मग्न बैठा हुआ है। सोमनाथ ने उस मुनि को प्रणाम किया और विनयपूर्वक पूछा—"महात्मा! आप कृपा करके मुझे यह बताइये कि मेरे लिए धन की प्राप्ति किस दिशा में है? मैं जिंदगी भर आप का नाम लेकर आराम से अपने दिन बिता सकूँगा।"

ध्यान मग्न मुनि ने हाथ का संकेत किया जिसका अर्थ था कि तुम मेरा ध्यान-भंग न करो, यहाँ से चले जाओ। पर सोमनाथ ने इसका अर्थ लगाया कि मुनि कहता है कि पूर्वी दिशा में तुम्हारे लिए धन की प्राप्ति है। वह उसी दिशा में चल पड़ा। संध्या तक वह चलता रहा, पर जंगल को वह पार न कर पाया। तब उसने सोचा कि कोई कंद, मूल और फल खाकर किसी पेड़ पर सो जाय। मगर रात भर जोर की हवा चलती रही जिससे सोमनाथ सो न पाया।

सवेरा होते ही सोमनाथ पेड़ से उतर पड़ा। थोड़ी दूर चलने पर उसे एक उखड़ा हुआ पेड़ दिखाई दिया, साथ ही उसकी जड़ों के बीच किसी के द्वारा गड़ा हुआ सोना दिखाई पड़ा। फिर क्या था, सोमनाथ लखपति बन गया।

सोमनाथ के पड़ोस में रंगनाथ नामक एक गृहस्थ था। वह निहायत गरीब था। वह लकड़ी काटकर बेच देता, लेकिन अपनी पत्नी और चार बच्चों का

राम निवास

पालन-पोषण नहीं कर पाता था। इसलिए उसने सोमनाथ से उसके धनी होने का रहस्य जान लिया।

सोमनाथ के बताये निशानों के आधार पर रंगनाथ मुनि की खोज में चल पड़ा और अंत में उससे मिला। उस वक़्त मुनि ध्यान में न था। रंगनाथ ने साष्टांग दण्डवत किया, फिर निवेदन किया कि मुनि ने सोमनाथ को जैसे धनप्राप्ति की दिशा बताई, वैसे उसे भी बतला दे।

मुनि ने आश्चर्य में आकर कहा–"मैंने तो सोमनाथ को कोई उपाय बताया नहीं।"

रंगनाथ ने सोचा कि मुनि उसकी सहायता करने से कतरा रहा है, गिड़-गिड़ाकर बोला–"महात्मा! मैं बाल-बच्चोंवाला गरीब गृहस्थ हूँ। आप को मेरी रक्षा करनी है।"

"पगले! सोमनाथ को अपने प्रारब्ध के कारण धन मिला है, यदि तुम्हें भी धन का योग हो तो क्या मैं उसे मिटा सकता हूँ?" इन शब्दों के साथ मुनि हँस पड़ा।

"तब तो आप कम से कम मुझे यह बताइये कि मुझे धन का प्रारब्ध है या नहीं?" उसने मुनि की ओर हाथ बढ़ाया।

मुनि ने रंगनाथ की हथेली की रेखाओं को देख कहा–"यदि तुम्हारे चौथा पुत्र न होता तो धन की प्राप्ति होती।"

रंगनाथ ने घर लौटकर अपनी पत्नी से कहा–"अगर हम अपने चौथे पुत्र को मार डाले तो हमें धन मिल जाएगा।"

रंगनाथ की पत्नी सर पीटते हुए बोली–"तुम मनुष्य नहीं, राक्षस हो! कहीं धन के लोभ में पड़कर कोई अपनी संतान का गला घोंटते हैं?"

इसके बाद पति-पत्नी के बीच इस बात को लेकर झगड़ा हुआ। रंगनाथ अपने चौथे लड़के को उठाकर जंगल में भाग गया। पड़ोसियों नेउसे पकड़कर राजा के हाथ सौंप दिया।

रंगनाथ को कारागार में बंद किया गया। हर कोई उसे गालियाँ देने लगा। धीरे-धीरे रंगनाथ के मन से धन का लोभ जाता रहा। तब उसे अपने इस भयंकर कार्य पर पश्चात्ताप होने लगा।

एक दिन मुनि ने न्यायाधीश से कहा–"रंननाथ अपने पुत्र को मारने के लिए तैयार हो गया है तो इसका मतलब है कि उसने मेरी बातों को ठीक से नहीं समझा। आप इसे कारागार से मुक्त कर सकते हैं।"

मुनि की सलाह पर न्यायाधीश ने रंगनाथ को मुक्त किया। तब मुनि ने रंगनाथ से कहा–"यदि तुम्हें सचमुच धन की प्राप्ति होनी है तो......" कुछ कहने को हुआ। पर रंगनाथ अपने कान पकड़कर बोला–"महात्मा! मुझे अब किसी की भी प्राप्ति नहीं चाहिए। जब से मुझे कारागार में डाल दिया गया है तब से मैं यही सोचकर चिंतित हूँ कि मेरी पत्नी और बच्चे अपने दिन कैसे काट रहे हैं? मैं अपनी मेहनत पर ही भरोसा रखता हूँ। अन्याय का धन मुझे नहीं चाहिए।"

इस पर मुनि ने हँसकर कहा–"तुम धन की चिंता क्यों करते हो? सोमनाथ की हालत जानते हो? उसे मानसिक शांति बिलकुल नहीं है। उसका सारा समय धन का पहरा देने में बीत रहा है। वह अपने रिश्ते व नातेदारों को संतुष्ट नहीं कर पा रहा है। उनकी ईर्ष्या को सहन न कर सकने के कारण पागल होता जा रहा है। एक ओर उसे इस बात का डर सता रहा है कि उसकी पत्नी अपना धन अपने मायकेवालों पर लुटा रही है। उसकी अपेक्षा तुम सब प्रकार से सुखी हो!"

व्यर्थ प्रयत्न

रामनगर नामक गाँव में जीवन नामक एक धनी था। उसकी माँ का व्यवहार बड़ा ही विचित्र था। वह भिखारियों से घृणा करती थी, लेकिन दो भिखारियों को वह प्रति दिन दोनों जून खाना खिलाया करती थी।

एक दिन जीवन ने अपनी माँ से इसका कारण पूछा। इस पर जीवन की माँ ने बताया कि उन लड़कों के दादा-परदादा बड़े धनी थे, पर जीवन के दादा की दुष्टता के कारण उनके परिवार की बुरी हालत हो गई और वे दरिद्र बन गये हैं।

यह बात सुनने पर जीवन का दिल पसीज उठा। उसने सोचा कि इन लड़कों के प्रति जो अन्याय हुआ है, उसे दूर करने की जिम्मेदारी उसी पर है।

इस विचार के आते ही जीवन उन लड़कों की माँ को देखने गया। उसकी हालत बड़ी खराब थी। उसने बताया कि वक़्त पर उचित इलाज न कराने के कारण उसके कई बच्चे मर गये हैं और सिर्फ़ ये दो लड़के ही बच रहे हैं। वह भीख माँगकर अपने दिन काटती है। जीवन ने उस औरत को भीख माँगने से मना किया और उसे यह वचन भी दिया कि हर मास उसे धन दिया जाएगा और दोनों लड़कों को पढ़ा-लिखाकर योग्य बनायेगा।

उन लड़कों में बड़े की उम्र नौ साल की थी। उसका नाम शंकर था। दूसरा लड़का गणपत सात साल का था। जीवन की मदद से उस गाँव में एक पाठशाला चलाई जाती थी। उस गाँव के शिक्षक के आश्रय में उन लड़कों को छोड़कर जीवन ने निवेदन किया कि वह उन्हें शिक्षा दें।

मगर शिक्षा के प्रति उन लड़कों में कोई खास अभिरुचि न थी। वर्णमाला

सीखने म ही उन्हें एक वर्ष लगा। शिक्षक ने जब यह बात जीवन को बताई, तब जीवन ने शिक्षक को समझाया–"बेचारे ये लड़के जिस वातावरण में फले वह कोई उनकी शिक्षा के अनुकूल न था। इन्हें आप पढ़ने दीजिए।"

पांच साल बीत गये। बाक़ी विद्यार्थी अपनी शिक्षा समाप्त कर कोई पेशेवर शिक्षा प्राप्त करने चले गये।

शिक्षक ने जीवन को बताया कि शंकर और गणपत पांच साल और पढ़े, तभी उनकी शिक्षा पूरी हो सकती है।"

"ऐसा करने पर उन्हें उचित प्रोत्साहन न मिलेगा।" जीवन ने समझाया।

इसके बाद जीवन ने उन लड़कों से पूछा–"तुम दोनों कैसी शिक्षा पाना चाहते हो?" शंकर ने बताया कि वह एक वैद्य बनना चाहता है। फिर क्या था, जीवन ने उसे एक नामी वैद्य के पास ले जाकर उसे वैद्य शास्त्र पढ़ाने की प्रार्थना की।

वैद्य ने शंकर की परीक्षा करके बताया–"यह लड़का साधारण शिक्षा में भी कमजोर है। इसे और कुछ वर्षों तक पढ़ने दीजिए।"

"आप चाहेंगे तो इसे वैद्यशास्त्र में प्रवीण बना सकते हैं। आप को अच्छा पुरस्कार दूंगा।" जीवन ने कहा। वैद्य ने पुरस्कार के लोभ में पड़कर अपने शिष्यों में से एक को घर भेजकर उसकी जगह शंकर को भर्ती कर लिया। जिस शिष्य को निकाला गया, उसने जीवन से निवेदन किया कि उसके साथ अन्याय न करे। इस पर जीवन ने उसे समझाया–"तुम तो एक अच्छे परिवार में पैदा हुए हो! जैसे-तैसे तुम अपनी जीविका चला सकते हो!"

इसके बाद जीवन ने गणपत से पूछा कि तुम कैसी शिक्षा प्राप्त करना चाहते हो? उसने मकान बनाने की शिक्षा प्राप्त करने की इच्छा प्रकट की। इस पर जीवन ने उसे एक वास्तु शास्त्री के यहाँ ले जाकर शिक्षा देने की प्रार्थना दी।

लेकिन वास्तु शास्त्री ने गणपत की परीक्षा लेकर बताया कि वह जो शिक्षा प्राप्त कर चुका है, वह पर्याप्त नहीं है ।

जीवन ने उसे समझाया—"यदि मन लगाकर शिक्षा दे तो कोई भी व्यक्ति किसी भी प्रकार की शिक्षा प्राप्त कर सकता है। मैं आप को आवश्यक धन दूंगा। आप इसे वास्तु शास्त्र पढ़ाइए।"

दोनों लड़कों ने दस साल तक थोड़ी-बहुत शिक्षा प्राप्त की। इसके बाद जीवन ने प्रयत्न किया कि कहीं उन्हें राज दरबार में कोई नौकरी मिल जाय! मगर कोई फ़ायदा न रहा। वैद्य शास्त्र और वास्तु शास्त्र में प्रवीणता प्राप्त युवकों की संख्या अधिक थी।

आखिर निराश हो जीवन ने राजा के दर्शन करके बताया कि उसके गाँव में एक सरकारी वैद्य तथा भवन का निर्माण करनेवाले एक व्यक्ति की जरूरत है, अतः वे दोनों पद मंजूर करें। राजा ने मान लिया।

जीवन ने अपने गाँव लौटकर गाँव के मुखिये को राजा का फर्माना दिखाया और कहा कि इन दो नौकरियों के लिए आवेदकों की माँग करते हुए ढिंढोरा पिटवाया जाय। ढिंढोरा सुनकर वैद्य शास्त्र और वास्तु शास्त्र में कुशलता प्राप्त

अनेक युवक आगे आये। उनके साथ शंकर और गणपति भी आ पहुँचे।

जीवन ने मुखिये को समझाया—"हमें तो पिछड़े हुए लोगों को प्रोत्साहन देना है। इसलिए शंकर को ग्राम वैद्य के पद पर और गणपत को भवन निर्माता के रूप में नियुक्त करेंगे।" मुखिया इस प्रस्ताव का विरोध न कर पाया, दोनों भाइयों को नौकरियाँ प्राप्त हुईं।

इसके थोड़े ही दिन बाद गाँववालों ने अनुभव किया कि शंकर के द्वारा किया जानेवाला इलाज खतरनाक है। उनकी शिकायतों की जीवन ने परवाह नहीं की। लेकिन गणपत को मकान बनाने का मौक़ा

जल्द नहीं मिला। इसलिए जीवन ने अपने पिछवाड़े में गणपत के द्वारा एक छोटा-सा मकान बनवाया। इसके पीछे जीवन का यह उद्देश्य था कि उसकी देखा-देखी और लोग गणपत के द्वारा मकान बनवा लेंगे।

एक दिन जीवन का छोटा लड़का गोपाल नये मकान में खेल रहा था, तभी अचानक मकान का एक हिस्सा टूटकर नीचे गिरा। लड़के के सिर पर ईंट गिर जाने से वह चीखकर नीचे गिर पड़ा। तब इलाज के लिए गोपाल को शंकर के पास ले जाया गया।

शंकर ने चार-पाँच दिन तक लड़के का इलाज किया, पर कोई फ़ायदा न रहा। इस पर शंकर ने जीवन से निवेदन किया—"आप कृपया इस लड़के को एक और वैद्य को दिखाइए।" जीवन घबरा गया और शंकर के गुरु के पास शहर में ले गया। उसने जल्द ही गोपाल को चंगा किया।

जीवन ने अपने लड़के को घर ले जाते हुए वैद्य से पूछा—"वैद्य महाराज! मैंने शंकर और गणपत को ऊपर उठाने का हर तरह से प्रयत्न किया, परंतु मेरा प्रयत्न बेकार गया। इसका कारण क्या है?"

वैद्य ने हँसकर बताया—"आप का प्रोत्साहन ही उनकी उन्नति में रोड़ा बन गया है। इस कारण से दोनों ने अपनी योग्यता को बढ़ाने का प्रयत्न नहीं किया। यदि आप उन्हें प्रोत्साहन देना चाहे तो आर्थिक दृष्टि से उनकी सहायता कीजिए। सलाहों के द्वारा उनमें उत्साह पैदा कीजिए, मगर उनकी उन्नति में योग्यता से बढ़कर विशेष प्रोत्साहन न दीजिए! ऐसा करने पर अयोग्य व्यक्तियों के हाथ जनता को सौंपने के साथ योग्य व्यक्तियों को निराश करनेवाले सिद्ध होते हैं।"

जीवन को अपनी भूल मालूम हुई। उसने शंकर और गणपत को फिर से पढ़ने के लिए छोड़ दिया। पांच साल और शिक्षा पाकर वे अपने अपने पेशे में प्रवीण बन गये।

दो बावरे

मंगला प्रसाद जीविका की खोज में सारे गाँव में भटकते आखिर एक छोटे से गाँव में पहुँचा। जहाँ सभी लोग बावरे थे।

गाँव में प्रवेश करते ही मंगला प्रसाद ने एक दृश्य देखा। एक बावरा आदमी भैंसे को लाठी से पीटते हुए चिल्ला रहा था—"जल्दी बच्चा दो, वरना और पीटूँगा।"

रस्से से बँधा भैंसा रस्सा तोड़ने की कोशिश करते चिल्ला रहा था। इस पर उसका रस्सा खोलते हुए वह व्यक्ति उसे धमकी दे रहा था—"मुझे यह सौदा नहीं चाहिए। तुझको लौटाकर मैं अपने सौ रुपये वापस ले लूंगा।"

बंधन से मुक्त होते ही भैंसा अपने पुराने मालिक के घर दौड़ पड़ा। वह बावरा भी उसके पीछे भागने लगा।

मंगला प्रसाद भी इस ख्याल से उस बावरे के पीछे चला कि आखिर देख तो लें कि क्या होता है! इसके पिछले दिन ही जानकीराम नामक व्यक्ति ने बावरे को वह भैंसा बेच दिया था। इसलिए बावरे ने जानकीराम के घर पहुँचकर कहा—"तुमने कहा था कि आधी रात के अन्दर ही यह भैंसा एक बछड़ा देगा, पर ऐसा न हुआ। इसलिए तुम अपने भैंसे को वापस लेकर मेरे सौ रुपये लौटा दो।"

जानकीराम ने भैंसे की पूँछ देख कहा—"इसे मैंने तुम्हारे हाथ नहीं बेचा था। तुम एक दूसरे भैंसे को लाकर मेरे सर मढ़ना चाहते हो! मैंने जब तुम्हें भैंसा बेचा था, तब उसकी पूँछ पर एक काली गोमक्खी बैठी थी, अब वह नहीं है।"

"शायद तुमने उस वक़्त ठीक से देखा न होगा। यह तो तुम्हारा ही भैंसा है। मेरे खानदान में झूठ बोलने की आदत बिलकुल नहीं है।" बावरे ने कहा।

शंकर दयाल सिंह

"तो तुम्हारा विचार है कि झूठ बोलने की आदत मेरे ही खानदानवालों में है?" जानकीराम ने गरजकर पूछा।

दोनों में बात बढ़ गई। अड़ोस-पड़ोस के लोग वहाँ पर जमा हुए। सबने उन्हें यही सलाह दी–"गाली-गलौज करके तुम दोनों आखिर कब तक लड़ते रहोगे? लाठी लेकर लड़ लो।" इन शब्दों के साथ दोनों के हाथ लाठियाँ दे दीं।

दोनों लाठी लेकर लड़ने लगे। पर किसी को कोई चोट न आई। लाठियाँ सड़ी-गली थीं, इसलिए टूट गईं।

"अरे, हमने तुम पर रहम खाकर लाठियाँ दीं तो तोड़ देते हो?" इन शब्दों के साथ सबने उन दोनों को पीटा।

दोनों के कपड़े मैल हो गये। तब तैश में आकर बोले–"इतने सारे लोग मिलकर हम को पीटते हैं? हम न्यायाधीश के पास जाकर शिकायत करते हैं।" यों कहकर दोनों ने स्नान किया, उजले कपड़े पहनकर न्यायाधीश के पास पहुँचे।

न्यायाधीश ने उनकी शिकायत सुनकर कहा–"तुमने बताया कि तुम दोनों लाठियों से लड़ें, बाद को सबने तुम्हें धूल में गिराकर पीटा, पर तुम्हारे कपड़े उजले कैसे हैं? यहाँ पर बिना गवाही के न्याय नहीं मिल सकता!" इन शब्दों के साथ न्यायाधीश ने उन्हें पिटवा दिया। तब कहा–"अब बतला दो, क्या क्या हुआ है?"

दोनों फ़रियादियों ने सोचा कि सारा क़िस्सा सुनाने पर न मालूम कितनी बार मार खानी पड़ेगी, अपनी शिकायत को वापस लेकर घर की ओर चल पड़े। तब मंगला प्रसाद ने समझाया–"तुम लोग तिल का ताड़ बनाकर नाहक़ तक़लीफ़ मोल लाये! भैंसे के बछड़ा देने में देरी हो गई! बस, यही है न? आज नहीं तो कल वह जरूर बछड़ा देगा! इस छोटी-सी बात के लिए झगड़ा ही क्यों? आइंदा तुम दोनों हिल-मिलकर रहो।"

इस तीसरे बावरे को उस गाँव में जरूर कोई न कोई काम मिल जाएगा।
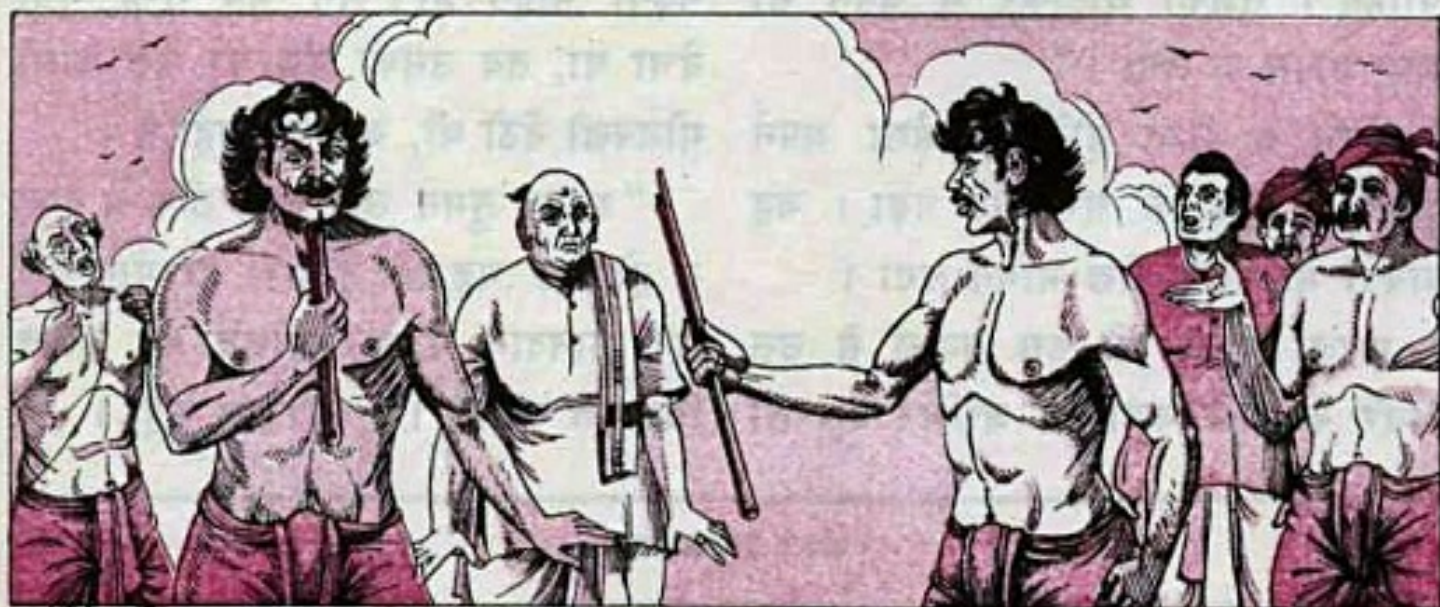
विचित्र बंधक

पुराने जमाने की बात है। पांचाल देश पर राजा उदयसेन शासन करता था। संगीत का वह बड़ा ही शौकीन था। उसके दरबार में कई गायक थे। लेकिन राजा उदयसेन की दृष्टि में सब से बड़ा गायक कृष्णशास्त्री था। कृष्णशास्त्री ने दरबारी संगीत विद्वान के पद पर रहना अस्वीकार कर दिया।

कृष्णशास्त्री ने राजा से स्पष्ट कह दिया—"महाराज! मैं अपनी कला का विक्रय नहीं कर सकता। आप जैसे श्रोता के रहने से ही मेरी कला की सार्थकता है। आप जब भी बुलावे, मैं स्वयं आकर आप को वेणुगान सुनाऊँगा। मैं नौकरी की अपेक्षा स्वेच्छा को अधिक मानता हूँ। संगीत से संबद्ध न होकर दूसरी कोई भी नौकरी आप दे तो मैं प्रसन्नतापूर्वक करूँगा।"

संगीत के प्रति अधिक अभिरुचि रखनेवाले राजा ने कृष्णशास्त्री के मन की भावना को समझ लिया और उसकी तारीफ़ की। राजा ने सोचा कि ऐसे महान विद्वान को कोई साधारण दूसरी नौकरी देना उसके प्रति अन्याय ही होगा। फिर क्या था, राजा ने कृष्णशास्त्री को अपने ही मित्र वृंद में एक माना और जब-तब कृष्णशास्त्री का वेणुगान सुनकर उसे पुरस्कार दिया करता था।

राजा शिकार खेलने जब भी जाता कृष्णशास्त्री को भी साथ ले जाता। कृष्णशास्त्री का वेणुगान सुनकर शेर-बाघ जैसे खूँख्वार जानवर भी रुक जाते। राजा का शिकार खेलना सरलतापूर्वक संपन्न हो जाता।

प्रति वर्ष नवरात्रि के दिनों में दरबार में संगीतोत्सव हुआ करता था। सभी में

कु. सरोजा अग्रवाल

कृष्णशास्त्री का वेणुगान अत्यधिक प्रशंसित होता था। इस कारण राजा अन्य विद्वानों की अपेक्षा कृष्णशास्त्री को दुगुने पुरस्कार दिया करता था।

इस कारण दरबारी संगीत विद्वान कृष्णशास्त्री के प्रति अधिक ईर्ष्या करते थे। लेकिन वे कृष्णशास्त्री का कुछ बिगाड़ न सके। उल्टे वे राजा की हाँ में हाँ मिलाते उनके प्रति ज्यादा आदर और श्रद्धा प्रदर्शित करने लगे।

कृष्णशास्त्री के यहाँ विवाह योग्य एक कन्या थी। उसका नाम चन्द्ररेखा था। वह गुणशर्मा नामक युवक से प्रेम करती थी। उसका पिता विष्णुशर्मा राजदरबार में एक अधिकारी था। कृष्णशास्त्री ने विष्णुशर्मा से बताया कि वह अपनी कन्या का विवाह विष्णुशर्मा के पुत्र गुणशर्मा के साथ करना चाहता है। इस पर विष्णुशर्मा ने कोई आपत्ति न उठाई। यह बात दरबारी संगीत विद्वानों के कानों में पड़ी। कृष्णशास्त्री से बदला लेने के लिए वे सब कोई योजना बनाने लगे।

कुछ गायकों ने विष्णुशर्मा के घर जाकर बताया–"तुम्हारा पुत्र तो बड़ा ही भाग्यवान है। कृष्णशस्त्री ज्यादा से ज्यादा दहेज देगा। उसके पीछे तो राजा एक कल्पवृक्ष जैसे जो हैं।"

उनकी बातें सुनने पर विष्णुशर्मा के मन में दहेज का लोभ पैदा हुआ। कृष्णशास्त्री ने विष्णुशर्मा को विवाह का निश्चय करने

की सलाह दी। इस पर विष्णुशर्मा ने एक हज़ार मुद्राएँ दहेज में देने की बात कही।

कृष्णशास्त्री को कुछ न सूझा। उस हालत में दरबारी गायकों ने कृष्णशास्त्री के घर पहुँचकर कहा–"हमने सुना है कि आप ने अपनी कन्या का विवाह विष्णुशर्मा के पुत्र गुणशर्मा के साथ करने का निश्चय किया है। आप तो बड़े भाग्यवान हैं। हम चाहते हैं कि सब प्रकार से शुभ हो!"

"आप लोगों का कहना तो सही है। पर मेरी समझ में नहीं आता कि मैं इतनी भारी रक़म कहाँ से लाऊँ? मेरे तो इस मकान के अतिरिक्त कोई संपत्ति है ही नहीं। इसे बंधक रखकर उधार लेना होगा। मगर सवाल यह है कि इतनी रक़म कौन देगा?" कृष्णशास्त्री ने चिंता व्यक्त की।

"आप इसकी चिंता क्यों करते हैं? हीरालाल सेठ तो हमारे मित्र हैं। उनको समझाकर आप के लिए आवश्यक धन हम उधार में दिलवा देंगे।" दरबारी गायकों ने समझाया।

कृष्णशास्त्री ये बातें सुन उछल पड़ा। उसने सबके प्रति कृतज्ञता प्रकट की और बताया कि दूसरे ही दिन वह हीरालाल के घर जाकर उधार माँग लायेगा।

दरबारी गायकों ने पहले ही हीरालाल के घर पहुँचकर सारी बातें समझाईं। दूसरे दिन कृष्णशास्त्री ने जब उसके घर पहुँचकर उधार माँगा, तब हीरालाल ने

कहा–"महाशय, आप जो धन चाहते हैं, सो मैं उधार में दूँगा। पर बंधक के रूप में मुझे आप के घर की ज़रूरत नहीं। मैंने आप के वेणुगान की बड़ी प्रशंसा सुनी है। उसे बंधक रखकर आप धन ले जाइए।"

कृष्णशास्त्री ने विस्मय में आकर पूछा–"मैं आप के मतलब को समझ पा नही रहा हूँ।"

"बात वैसे कोई आश्चर्य करने की नहीं। मेरे उधार के चुकने तक आप को कहीं अपना वेणुगान सुनाना नहीं चाहिए! बस, इतनी सी ही बात है!" हीरालाल ने मुस्कुराते हुए कहा।

कृष्णशास्त्री ने विवश होकर सेठ की शर्त को मान लिया, अपना वेणुगान बंधक रखकर आवश्यक धन ले लिया। उस धन से चन्द्ररेखा का विवाह निर्विघ्न संपन्न हुआ।

इसके बाद नवरात्रि का उत्सव आ पहुंचा। राजा ने कृष्णशास्त्री के यहाँ खबर भेज दी कि पर्व के दिन वेणुगान करे।

कृष्णशास्त्री ने राजा के दर्शन करके बताया–"महाराज! मैं इस वर्ष वेणु का स्पर्श तक न करूँगा। मेरी हालत अच्छी रही तो अगले साल देखा जाएगा।"

राजा ने चकित होगर पूछा–"आप के वेणुगान के बिना नवरात्रि का उत्सव कैसे संपन्न होगा? आप इनकार क्यों करते हैं? इसका कोई कारण भी तो होगा?"

कृष्णशास्त्री ने सारा क़िस्सा राजा को कह सुनाया।

राजा को यह समझते देर न लगी कि कृष्णशास्त्री के साथ उसके प्रति षड़यंत्र करने का प्रयत्न हुआ है। राजा ने तत्काल हीरालाल को बुलवाकर कठोर शब्दों में इस विचित्र बंधक का रहस्य बताने पर ज़ोर दिया। तब स्पष्ट हुआ कि इस षड़यंत्र के पीछे उसी के दरबार के संगीत विद्वानों का हाथ रहा है। इस पर राजा ने हीरालाल को दण्ड के रूप में बंधक-पत्र वापस ले लिया पर दरबारी गायकों की नौकरियाँ जाती रहीं।

लोभी जब दाता बना

एक कंजूस धनी था। उसने अपनी सारी जिंदगी धन जोड़ने में ही बिता दिया था।

एक दिन एक सन्यासी उस धनी के पास आया। सन्यासी को देखते ही धनी ने सोचा कि वह किसी धार्मिक कार्य के निमित्त धन माँगने आया है, और बोला– "महात्मा, फिलहाल मेरे पास कुछ नहीं है, बाद को देखा जाएगा।"

सन्यासी ने हँसकर धनी से कहा–"महाशय, मैं आप के पास याचना करने नहीं आया हूँ, छोटी सी सहायता माँगने आया हूँ। आप इस सुई को अपनी जिंदगी भर सुरक्षित रखकर अगले जन्म में कृपया मुझे वापस कर दीजिए।"

धनी खिल-खिलाकर हँस पड़ा और बोला–"महात्मा, शायद आप का मति भ्रष्ट हो गया है, मैं इस सुई को अगले जन्म तक कैसे ढोकर ले जा सकूँगा?"

"यदि आप इस सुई को अपने साथ नहीं ले जा सकते तो आप की कमाई हुई संपत्ति को क्या करना चाहते हैं?" सन्यासी ने पूछा।

धनी की आँखें खुल गईं। उस दिन से धनी ने दान देना शुरू किया और दाता के नाम से प्रसिद्ध हुआ।

भक्त बना चोर

एक गाँव में रहीम नामक एक अमीर था। उसकी इकलौती बेटी रजिया बड़ी ही खूबसूरत- थी। रहीम के पास इतनी जायदाद थी कि घर बैठे दस पीढ़ियों तक खाई जा सकती थी।

रहीम इस्लाम का बड़ा भक्त था। वह दिन में पाँच बार नमाज करता और कुरान पढ़ता। वह अल्लाह के नाम पर अपनी जान तक देने को तैयार था। कोई भक्त मिल जाता तो उसके पीछे वह दिल खोलकर खर्च कर देता।

रजिया जब युक्त वयस्का हुई तब कई अमीर खानदान के युवक उसके साथ शादी करने की कोशिश करने लगे। मगर रहीम को उनमें से एक भी अल्लाह का भक्त दिखाई न दिया। उसने तो अपनी बेटी की शादी एक भक्त के साथ करने का निश्चय किया था।

एक दिन रहीम की बीबी सुलताना ने अपने खाविद से कहा–"देखोजी, हमारी लड़की से शादी करने के लिए कई अमीर लड़के उत्सुक हैं। लेकिन आप को एक भी रिश्ता पसंद नहीं आ रहा है। ऐसी हालत में बेटी की शादी कैसे होगी?"

"पगली! हमारे पास जमीन-जायदाद की कोई कमी नहीं! अलावा इसके मैं रजिया की शादी किसी अमीर घराने में करने की इच्छा नहीं रखता। चाहे लड़का गरीब ही क्यों न हो, अगर वह अल्लाह का भक्त और ईमानदार है तो मैं उसी के साथ रजिया की शादी करना चाहता हूँ। अल्लाह की मेहरबानी से मेरी इच्छा जरूर पूरी होगी।" रहीम ने समझाया।

उस दिन रात को नसीर नामक एक चोर रहीम के घर चोरी करने आया। उसने उनकी बातचीत सुनी। दूसरे दिन

एम. मुमताज बेगम

सवेरे जब रहीम नमाज़ करने मसजिद की ओर चल पड़ा, तब उससे पहले ही नसीर मसजिद में पहुँचा और गलत-सलत नमाज़ पढ़ने का अभिनय करने लगा।

रहीम ने देखा, जब भी वह नमाज़ करने जाता, तब वह चोर बड़ी भक्ति के साथ नमाज़ पढ़ते दीखता। वह मसजिद में ही सोया करता था। इसे देख एक दिन रहीम ने नसीर से पूछा—"तुम किस गाँव के रहनेवाले हो? तुमको मैं दस दिन से मसजिद में सोते देख रहा हूँ।"

इसी मौक़े का इंतजार करनेवाला चोर बोला—"महाशय, मेरा अपना कोई गाँव नहीं है। मेरे माँ-बाप भी नहीं हैं। अल्लाह की याद करते दिन बिताना ही मेरा काम है।"

"तुम कहाँ खाते-पीते हो?" रहीम ने पूछा।

"अल्लाह की प्रार्थना करते रहने पर मुझे भूख-प्यास का ख्याल नहीं होता। कभी रात में भूख लगे तो अल्लाह की मेहरबानी से कोई न कोई मुझे कुछ खिला देते हैं। अल्लाह की भक्ति से मेरा पेट भर जाता है।" नसीर झूठ बोला।

वास्तव में नसीर को दिन-रात मसजिद में नमाज़ पढते देख गाँववाले उसे कुछ न कुछ खिला देते थे।

चोर की बातें सुन रहीम ने सोचा कि वह एक सच्चा भक्त है। इसके बाद उसने यह निर्णय कर लिया—"इतनी छोटी उम्र में यह कैसी भक्ति रखता है। देखने में सुंदर और बुद्धिमान है। अल्लाह की मेहरबानी से इतने दिन बाद मेरी इच्छा की पूर्ति हो गई। मेरी बेटी के लिए यह योग्य पति है। इसी के साथ मैं अपनी बेटी की शादी करूँगा।"

उस दिन से रहीम रोज अपने घर से चोर के लिए मिष्टान्न भिजवाने लगा।

इस तरह चालीस दिन बीत गये। इस बीच चोर सचमुच भक्ति में लीन हो गया। रहीम के घर का खाना खाते,

प्रति दिन अल्लाह की प्रार्थना करते, बड़ों के उपदेश सुनते सचमुच उसमें बड़ा परिवर्तन आया। उसे लगा कि वह जैसी ज़िदगी बिता रहा है, वह सब से बढ़िया है। वह अपने पापों तथा चोरियों की याद करके ध्यान करते समय रो पड़ता था।

एक दिन रहीम ने नसीर से कहा— "बेटा, तुमको देखने पर मुझे बड़ी खुशी हो रही है। तुम जैसे भक्त की प्रतीक्षा करते आज तक मैंने अपनी बेटी की शादी नहीं की। अगर तुम मेरी बेटी के साथ शादी करोगे तो मैं बड़ा प्रसन्न हो जाऊँगा।"

ये बातें सुनने पर चोर रहीम के पैरों पर गिर पड़ा और आँसू बहाते हुए बोला— "महानुभाव! आप मुझे माफ़ कीजिएगा। मैं एक चोर हूँ। एक दिन की रात को मैं आप के घर चोरी करने आया। आप पति-पत्नी की बातचीत सुनी, इस पर आप को धोखा देकर आप की बेटी के साथ शादी करने के ख्याल से आप को खुश करने के लिए मैंने भक्ति का यह स्वांग रचा। लेकिन इन चालीस दिनों में मैं बिलकुल बदल गया हूँ। मैं आइंदा कभी चोरी नहीं करूँगा। मेहनत करके अपना पेट भरूँगा। मैं अपनी सारी ज़िंदगी अल्लाह की सेवा में बिता दूँगा। मैं आप की बेटी के लिए क़ाबिल नहीं हूँ। उसके साथ शादी करने का दुष्ट विचार भी मैं अब नहीं रखता। आप को मैंने दगा दिया, इसके लिए आप जो भी सजा दे, मैं भोगने के लिए तैयार हूँ।"

रहीम ये बातें सुन स्तब्ध रह गया। थोड़ी देर बाद बोला—"पगले, तुमने अज्ञानवश ज़रूर कुछ किया है। तुम्हारे भीतर यह ज्ञानोदय हो गया है कि पाप करने पर अल्लाह माफ़ नहीं करेंगे। अल्लाह ने मेरी बेटी के वास्ते ही तुम को भेजा है। मैं तुम दोनों की शादी करूँगा।"

इसके बाद रजिया और नसीर की शादी ठाठ से मनाई गई। नसीर ईमानदारी के साथ अपने दिन बिताते ससुर के योग्य दामाद कहलाया।

इस बीच विभीषण वहाँ पर आ पहुँचा। उसे देख वानरों ने मेघनाद समझा और डर के मारे इधर-उधर भागने लगे। सुग्रीव के आदेश पर जांबवान ने वानरों को समझाया कि वह व्यक्ति मेघनाद नहीं, बल्कि विभीषण है।

राम और लक्ष्मण की हालत पर विभीषण बड़ा दुखी हुआ। उसकी यह आशा जाती रही कि वह अब लंका का राजा बनेगा।

इस पर सुग्रीव ने विभीषण के साथ आलिंगन करके बताया—"विभीषण! तुम यह न समझो कि रावण और इंद्रजीत की विजय हो गई है। तुम जरूर लंका का राजा बनोगे! राम और लक्ष्मण के प्राणों के लिए कोई खतरा नहीं है। वे दोनों होश में आते ही शत्रुओं का नाश कर बैठेंगे।"

इसके बाद सुग्रीव ने अपने मामा सुषेण से कहा—"राम और लक्ष्मण के होश में आते ही कुछ वानरों को साथ लेकर आप किष्किंधा में चले जाइए। मैं दुष्ट रावण का परिवार के साथ वध करके सीताजी को ले आऊँगा।"

इसके उत्तर में सुषेण ने कहा—"प्राचीन काल में देवता और दानवों का जो युद्ध हुआ था, उसके बारे में मैं पूरी जानकारी रखता हूँ। उस वक़्त भी राक्षसों ने माया युद्ध करके अनेक देवताओं को मार गिराया था। कुछ देवता बेहोश हो गये थे। कुछ

२४. गरुड़ की सहायता

देवता मर गये। उस वक़्त देवताओं के गुरु बृहस्पति ने मृत संजीवनी विद्या के द्वारा तथा जड़ी-बूटियों से भी देवताओं का इलाज किया था। संजीवकरणि और विशल्यकरणि नामक औषधियाँ क्षीर सागर के पास की पहाड़ियों में पाई जाती हैं। प्राचीन काल में जहाँ पर क्षीर सागर का मंथन हुआ था, वहाँ पर चन्द्र पर्वत तथा द्रोण पर्वत नामक दो पर्वत हैं। उन्हीं पर ये औषधियाँ प्राप्त होती हैं। विलंब किये बिना वहाँ पर तुम हनुमान को भेज दो।"

इस बीच प्रलय काल जैसी आँधी उठी। पेड़ सब उखड़कर गिर गये। जानवर तथा अन्य प्राणी घबराहट के मारे इधर-उधर भागने लगे। उसी वक़्त उधर से निकलनेवाले गरुड़ वानरों को दिखाई दिया। गरुड़ को देखते ही राम और लक्ष्मण को बाणों के रूप में बांधे हुए सर्प डरकर भाग गये।

गरुड़ राम और लक्ष्मण के निकट उतर पड़ा। उसने उनके मुख मण्डल और शरीर पर हाथ फेरा, दूसरे क्षण ही उनके घाव भर गये। तब गरुड़ ने दोनों के साथ आलिंगन किया।

रामचन्द्र ने गरुड़ से कहा—"तुम्हारी कृपा से हम दोनों भाई पहले जैसे स्वस्थ और शक्तिशाली बन गये। तुम्हें देखने पर हमें वह आनंद हो रहा है जो हमारे पिता महाराजा दशरथ तथा पितामह महाराजा अज को देखने पर होता था। तुम्हारे दिव्य अस्त्र और आभूषण देखने से हमें आश्चर्य हो रहा है, तुम कौन हो? शीघ्र अपना परिचय दो।"

गरुड़ ने आनंद बाष्प गिराते हुए कहा—"रामचन्द्रजी! मैं आप का मित्र और आत्मबंधु हूँ। आप के प्राणों के बराबर का व्यक्ति हूँ। मेरा नाम गरुड़ है। मैं आप दोनों की सहायता करने के लिए आया हूँ। ये बाण-पाश वास्तव में सर्प हैं। इनसे मुक्त करना सबके लिए संभव

नहीं है। इसलिए आप की हालत का पता लगते ही दौड़ा-दौड़ा आया हुआ हूँ। मैंने आप को बंधन-मुक्त किया। इस युद्ध में आप लोगों को असावधान नहीं रहना चाहिए। अब आप लोगों की समझ में आया होगा कि राक्षसों पर बिलकुल विश्वास नहीं करना चाहिए।"

इसके बाद गरुड़ रामचन्द्रजी से विदा लेते हुए बोला—"आप इस वक़्त मुझसे यह न पूछिएगा कि मैं आप लोगों का किस तरह से मित्र हूँ। इस युद्ध में विजयी होने पर यह बात आप स्वयं समझ जायेंगे। युद्ध की समाप्ति पर लंका में केवल बूढ़े और बच्चे ही रह जायेंगे। रावण की मृत्यु होगी और सीताजी आप को प्राप्त होंगी।" यों समझाकर गरुड़ ने रामचन्द्र और लक्ष्मण की प्रदक्षिणा की। उनके साथ फिर से आलिंगन करके आसमान में उड़कर चला गया।

राम और लक्ष्मण के स्वस्थ होते ही वानर प्रसन्न हो पूँछ हिलाते कोलाहल कर उठे। भेरियाँ तथा मृदंग बज उठे। वानरों ने पेड़ उखाड़कर लंका नगर के द्वारों को घेर लिया। तब तक आधी रात हो चुकी थी।

उस अर्द्ध रात्रि के समय वानरों का कोलाहल रावण तथा राक्षसों ने सुना।
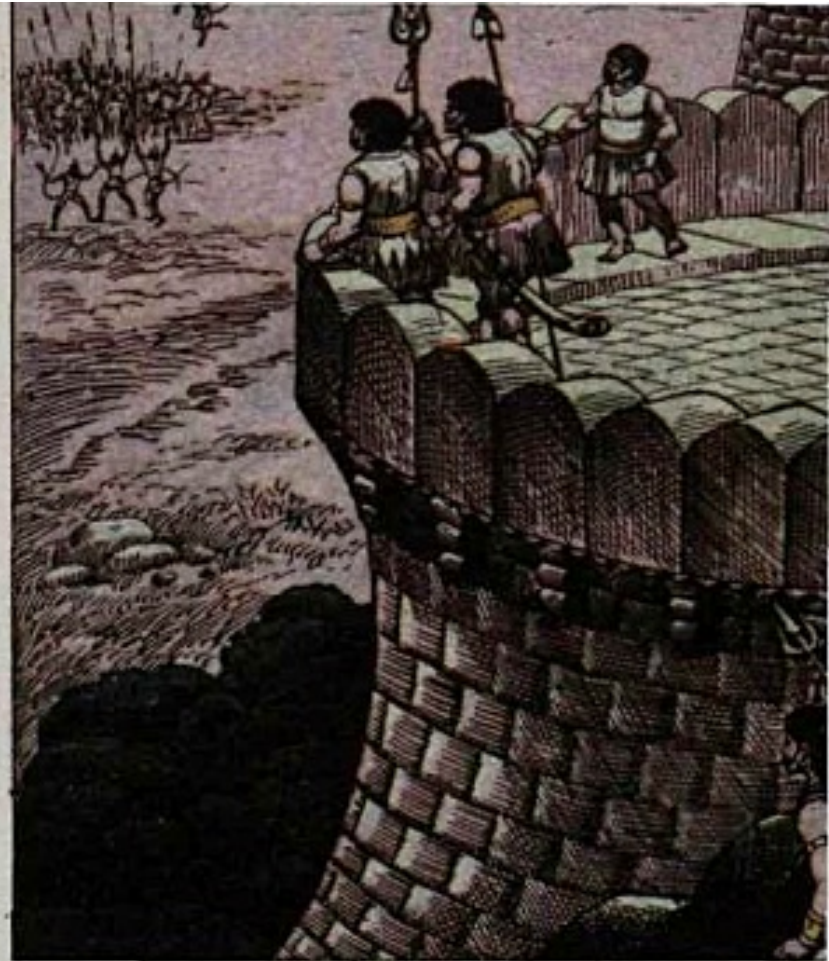
रावण ने अपने मंत्रियों को बुलवाकर कहा—"लगता है कि वानर प्रसन्न स्थिति में हैं। उन्हें तो राम और लक्ष्मण के वास्ते रोना था। वे लोग क्यों खुश नजर आते हैं?" इसके बाद रावण ने वानरों के उत्साह का कारण जानने के लिए राक्षसों को भेजा।

राक्षसों ने चहार दीवारी पर चढ़कर देखा। वानर सेना लंका के द्वारों को घेरी हुई है और रामचन्द्र तथा लक्ष्मण होश में आये हुए हैं। इस पर राक्षसों ने लौटकर यह समाचार रावण को दिया।

रावण यह जानकर अचरज में आ गया कि राम और लक्ष्मण मेघनाद के द्वारा

प्रयोग किये गये बाणों के बंधनों से मुक्त हैं। वासुकी जैसे मंत्रपूरित बाण भी बेकार सिद्ध हो गये थे। इस पर उसने धूम्राक्ष नामक राक्षस को बुलवाकर आदेश दिया–"तुम बड़ी भारी सेना को साथ ले जाकर हमला करो और वानर तथा राम का वध कर डालो।"

धूम्राक्ष तुरंत वहाँ से चला गया। सेनाध्यक्ष से मिलकर बताया कि वह युद्ध भूमि में जा रहा है, इसलिए उसके वास्ते पर्याप्त सेना तैयार रखे। फिर क्या था, धूम्राक्ष के लिए सेना तैयार हो गई। विभिन्न प्रकार के अस्त्रों से लैस राक्षस सैनिक उस सेना में थे। उन सैनिकों को साथ ले एक उत्तम क़िस्म के रथ पर सवार होकर धूम्राक्ष पश्चिमी द्वार के पास पहुँचा।

धूम्राक्ष को देखते ही वानरों ने कोलाहल मचाया। दोनों सेनाओं के बीच लड़ाई शुरू हो गई। राक्षसों के शस्त्रों के द्वारा मार खाते हुए वानरों ने पेड़ और शिलाओं के साथ राक्षसों पर प्रहार किया। आखिर राक्षसों की अधिक क्षति हुई और वे भागने लगे। इसे देख धूम्राक्ष ने वानरों को सताना प्रारंभ किया। वानर भी अधिक संख्या में मर गये।

धूम्राक्ष ने न केवल वानरों को मारा, बल्कि वह वानरों को भगाने भी लगा। इस दृश्य को देखने पर हनुमान का क्रोध उमड़ पड़ा। उसने एक बड़ी शिला उठाई और धूम्राक्ष के रथ को तोड़ डाला। रथ की ओर शिला के आते देख धूम्राक्ष रथ से उतर पड़ा और गदा लेकर खड़ा हो ग्या।

इसके बाद हनुमान पेड़ उखाड़कर राक्षसों पर बुरी तरह से प्रहार करने लगा। राक्षस भाग गये। तब हनुमान ने धूम्राक्ष पर हमला किया।

धूम्राक्ष ने गदा लेकर हनुमान का सामना किया और हनुमान के सिर पर दे मारा। हनुमान ने उस प्रहार की परवाह न की। उल्टे क्रोध में आकर एक

पर्वत शिखर को उस पर फेंक दिया। चोट खाकर धूम्राक्ष मर गया। इसे देख वानर उत्साह में आ गये और दुगुने वेग के साथ राक्षसों पर आक्रमण कर दिया। राक्षस भयभीत हो लंका में भाग गये। तब वानरों ने हनुमान की बड़ी प्रशंसा की।

धूम्राक्ष की मौत का समाचार सुनकर रावण क्रोध में आ गया। उसने वज्रदंष्ट्र नामक राक्षस को आदेश दिया–"तुम तुरंत युद्ध भूमि में चले जाओ! राम, सुग्रीव और समस्त वानरों का वध करके तब लौट आओ।"

वज्रदंष्ट्र माया की विद्याओं में प्रवीण था। उसने अपने साथ एक भारी सेना ली, कवच धारण किया, धनुष और बाण लेकर रथ पर सवार हो युद्ध क्षेत्र को निकल पड़ा। उसके साथ अच्छे-अच्छे अस्त्रों से लैस अनेक राक्षस वीर भी चल पड़े।

वज्रदंष्ट्र की राक्षस सेना लंका नगर के दक्षिणी द्वार से होकर बाहर आई। उस द्वार पर अंगद ने घेरा डाल दिया। उस युद्ध में राक्षसों ने अनेक वानरों को मार डाला। इस पर क्रुद्ध हो अंगद बुरी तरह से राक्षसों का वध करने लगा। उसके प्रहारों से राक्षसों के सिर फूटने लगे।

अंगद के हमले के सामने राक्षस सेना ठहर न पाई, राक्षस सेना के तितर-बितर होते देख वज्रदंष्ट्र कुपित हो उठा और उसने वानर सेना पर बाणों की वर्षा की। आखिर अंगद और वज्रदंष्ट्र जूझ पड़े। उनके बीच जो द्वन्द्व युद्ध हुआ, उसमें अंगद ने वज्रदंष्ट्र के रथ को एक शिला उठाकर तोड़ डाला। इस पर वज्रदंष्ट्र एक गदा लेकर जमीन पर कूद पड़ा, अंगद के साथ लड़ते-लड़ते थोड़ी ही देर में बेहोश हो गया।

होश में आते ही वज्रदंष्ट्र ने अंगद की छाती पर गदा का प्रहार किया। इसके बाद वे दोनों मुष्ठि युद्ध करने लगे। बड़ी

देर तक लड़ाई होती रही। आखिर थककर वज्रदंष्ट्र घुटनों के बल बैठ गया। उस वक़्त अंगद ने अचानक वज्रदंष्ट्र का सर काट डाला। वानर सिंहनाद कर उठे।

वज्रदंष्ट्र की मृत्यु का समाचार जानकर रावण ने अकंपन नामक राक्षस वीर को एक बड़ी सेना सहित युद्ध भूमि में भेजा। अकंपन एक श्रेष्ठ रथ पर सवार हो विशाल सेना के साथ चल पड़ा।

इस बार राक्षस और वानरों के बीच घनघोर युद्ध हुआ। दोनों दलों के अनेक वीर मारे गये। इस पर कुमुद, नल, मैंद तथा द्विविद नामक वानर वीर उत्साह में आकर राक्षसों का वध करने लगे।

अकंपन ने वानर वीरों को पहचानकर उनकी ओर अपना रथ बढ़ाया। अकंपन के सामने वानर वीर ठहर न पाये। इस बात को भाँपकर हनुमान आगे आया। इस पर अकंपन ने हनुमान पर बाणों की वर्षा की। हनुमान ने उन बाणों की परवाह नहीं की। भयंकर रूप से सिंहनाद किया, एक भारी शिला को उठाये, उसे चारों ओर घुमाते हुए अकंपन पर हमला कर बैठा।

लेकिन अकंपन ने अपने बाणों के द्वारा हनुमान के हाथ में स्थित शिला के टुकड़े-टुकड़े कर दिये। इस पर हनुमान ने एक साल वृक्ष को उखाड़ा और अकंपन पर दे मारा। चोट खाकर अकंपन ठण्डा पड़ गया।

राक्षस इसे देख डर गये। अपने सारे आयुध वहाँ पर फेंककर लंका में भाग गये।

अकंपन के वध करने पर वानरों ने हनुमान की प्रशंसा की। हनुमान ने उन सब का अभिनंदन किया। इसके बाद वानरों ने इस प्रकार गर्जन किया जिसे सुनकर राक्षस घबरा गये।

अकंपन की मौत की खबर सुनते ही रावण थोड़ी देर के लिए चिंता में डूब गया। इसके उपरांत अपने मंत्रियों के साथ परामर्श करके सेना-व्यूहों का पर्यवेक्षण
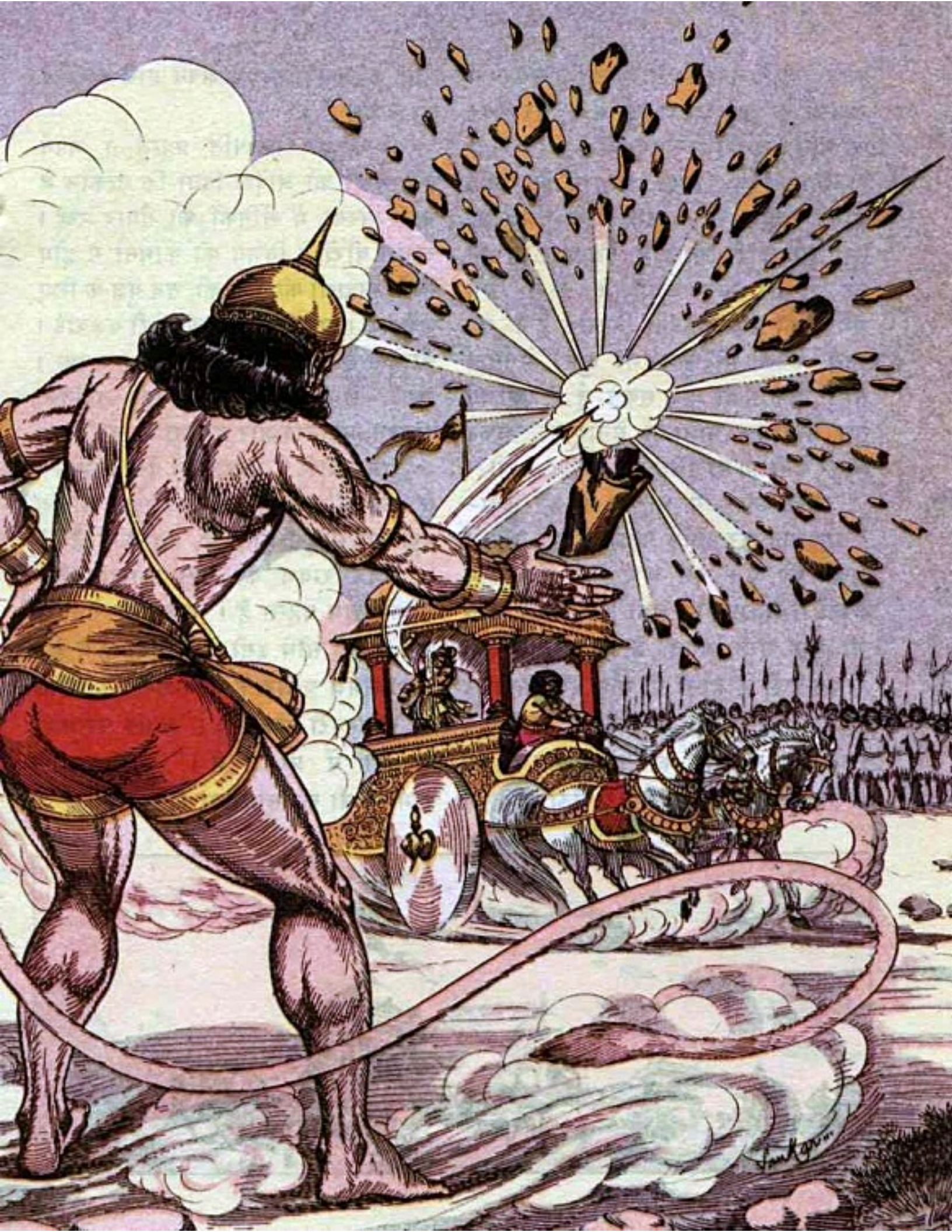
करने चला गया। सारे लंका नगर में राक्षसों के झंडे लहरा रहे थे। पर नगर को वानर सेनाएँ घेरे हुए थीं।

रावण पुनः अपने दरबार में लौट आया, प्रहस्त को आदेश दिया—"प्रहस्त! मुझे लगता है कि शत्रु सेनाएँ लंका को घेर ले तो अन्य लोगों के द्वारा उन्हें भगाने का प्रयत्न करना निरर्थक है। यह कार्य केवल मैं, कुंभकर्ण, तुम, मेघनाद तथा निकुंभ ही कर सकते हैं। इसलिए तुम आवश्यक मात्रा में सेनाएँ ले जाकर वानर सेना को पराजित करके लौट आओ!"

इसके उत्तर में प्रहस्त ने यों कहा—"इस बात पर हमने पहले ही पूर्ण रूप से चर्चा की है। इस चर्चा को लेकर हम लोगों में मतभेद भी हुआ था। इस वक़्त भी मुझे ऐसा लगता है कि सीताजी को रामचन्द्रजी के हाथों में सौंप देना हितकर है, वरना युद्ध को आगे बढ़ाना चाहिए। फिर भी मैं आप की इच्छा का पालन करने के लिए सदा तैयार बैठा हूँ। मैं आप के वास्ते युद्ध में अपने प्राण तक देने को सन्नद्ध हूँ।"

यों कहकर सेनापति प्रहस्त ने अपने सेनाध्यक्षों को आदेश दिया कि तत्काल वे भारी संख्या में सैनिकों को तैयार रखें। राक्षस वीरों ने विजय की कामना से होम किये, ब्राह्मणों की पूजा की, तब युद्ध के लिए चल पड़े। प्रहस्त ने युद्ध की भेरी बजवाई। घोड़ों से जुते रथ पर सवार हो निकल पड़ा। इसके साथ उसके चार मंत्री नरांतक, कुंभहन, महानाद और समुन्नत भी चल पड़ा।

रामचन्द्रजी ने प्रहस्त को देख विभीषण से कहा—"वह आनेवाला राक्षस अत्यंत पराक्रमी मालूम होता है, वह कौन है?"

"वह रावण का महा सेनापति है। उसका नाम प्रहस्त है। रावण की सेना में एक तिहाई सीधे इसी के अधीन रहती है। यह विभिन्न प्रकार के अस्त्र-शस्त्रों के प्रयोग की जानकारी रखता है। अत्यंत पराक्रमी के रूप में प्रसिद्ध है।" विभीषण ने रामचन्द्रजी को समझाया।

वरम् पर्वत दुर्गेषु भ्रान्तम् वन चरैः सह,
न मूर्खजन संपर्कः सुरेन्द्र भवनेष्वपि ।। १ ।।

[मूर्ख लोगों के बीच सुख-वैभव का जीवन बिताने की अपेक्षा जंगलों व पहाड़ों में जंगली जानवरों के बीच जीवन बिताना ज्यादा हितकर है।]

हरेः पदाहतिः श्लाघ्या न श्लाघ्यम् खररोहणम्
स्पर्दापि विदुषा युक्ता न युक्ता मूर्ख मित्रता ।। २ ।।

[गधे पर सवार करने की अपेक्षा महाविष्णु के द्वारा लात खाना जैसे उत्तम है, वैसे ही मूर्खों के साथ मैत्री करने की अपेक्षा पंडितों के साथ शत्रुता कहीं उत्तम है।]

अन्यस्माल्लब्दपदः प्रायो नीचोपि दुःसहो भवति
रवि रपि न दहति ता दृग या दृग अयम् दहति वालुका निकरः ।। ३ ।।

[अपनी शक्ति के द्वारा उन्नति न करके दूसरों की मदद से उच्च पद को प्राप्त होनेवाले नीच के साथ सहन करना कठिन है। जैसे सूर्य की अपेक्षा सूर्य की किरणों के द्वारा तप्त होनेवाले बालू को सहन करना कठिन है न?]

हित-अहित

Photo by K. S. Vijayaker

पुरस्कृत
परिचयोक्ति

शेर को मैंने दोस्त बनाया!

प्रेषक :
नरेश आहूजा

Photo by P. C. Dhir

५२१. सेक्टर १८ बी
चंडीगढ़-१६००१८

सांप को मैंने गले लगाया !!।

पुरस्कृत
परिचयोक्ति

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार २०)

★ परिचयोक्तियाँ अक्तूबर १० तक प्राप्त होनी चाहिए। सिर्फ़ कार्ड पर ही लिख भेजें।

★ परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्द की हों और परस्पर संबंधित हों, पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ दिसम्बर के अंक में प्रकाशित की जायेंगी!

चन्दामामा

इस अंक की कथा-कहानियाँ-हास्य-व्यंग्य

Printed by B. V. REDDI at Prasad Process Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for CHANDAMAMA CHILDREN'S TRUST FUND (Prop. of Chandamama Publications) 2 & 3, Arcot Road. Madras 600 026; Controlling Editor: NAGI REDDI

उसके जन्मदिन को रसीला बनाइये

पॅरी की इस मीठी दुनिया में से कुछ भी पसंद कीजिए : चॉकलेट एक्लेर्स, कोकोनट एक्लेर्स, पाइनेपल लिक्युएर्स, लैक्टो बॉन-बॉन्स और ऑरेन्ज कैन्डीज़

Parry's
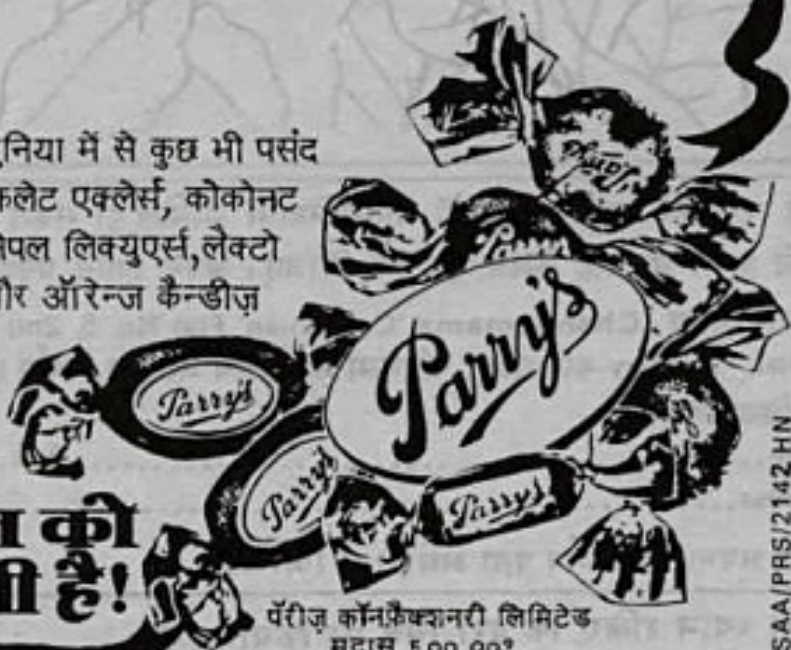
पॅरीज़ कॉनफ़ैक्शनरी लिमिटेड
मद्रास ६०० ००१.

SAA/PRS/2142 HN

चन्दामामा-कैमल रंग प्रतियोगिता

निःशुल्क प्रवेश

इनाम जीतिए

कैमल–पहला इनाम १५ रु.
कैमल–दूसरा इनाम १० रु.
कैमल–तीसरा इनाम ५ रु.
कैमल–आश्वासन इनाम ५
कैमल–सर्टिफिकेट १०

केवल १२ वर्ष तक के विद्यार्थी प्रतियोगितामें शामिल हो सकते हैं। ऊपर दिये गये चित्रमें अपने मनचाहे कैमल रंग भर दिजिए। अपने रंगीन प्रवेश-पत्र नीचे दिये गए पत्ते पर भेजिए 'Chandamama 'Corinthian' Flat No. 5, 2nd Floor, 17 Arthur Bunder Road, Colaba, Bombay-400 005. परिणाम का निर्णय अन्तिम निर्णय होगा। और कोई भी पत्रव्यवहार, नहीं किया जाएगा।

Name.. Age.................

Address..

कृपया अपना नाम और पता अंग्रेज़ी में लिखिए।

CONTEST NO. 5

कृपया ध्यान रखिए कि पूरा चित्र पेंट किया जाये।

चित्र भेजने की अंतिम तारीख: २०-१०-१९७६

Vision

Breeze/ABW/76/Hindi/3

Asoka
GLUCOSE
MILK BISCUITS
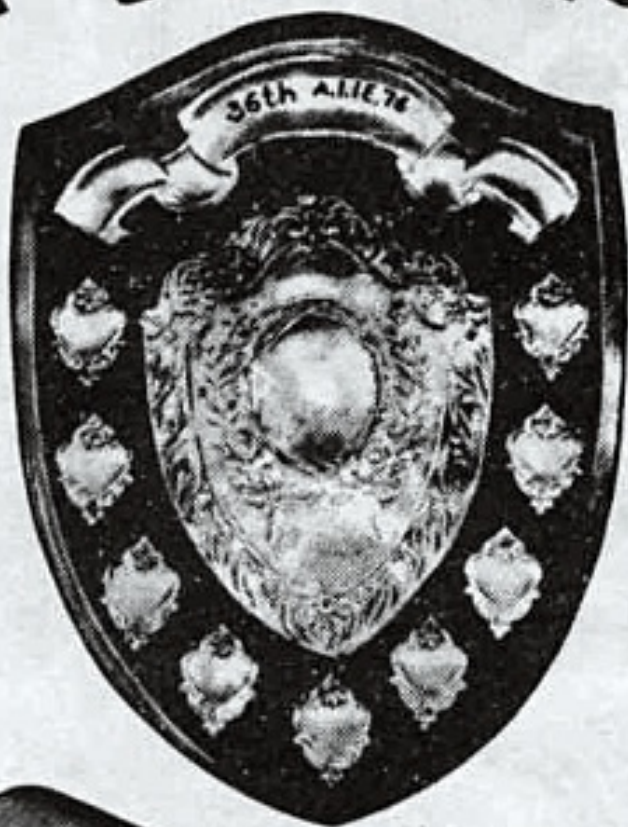
असोका

३६ वी भारतीय औद्योगिक प्रदर्शनी हैंदराबाद में एक बार फिर प्रथम पुरस्कार प्राप्त कर्ता. पोष्टिक पदार्थों एवं तत्व विशेष से पूर्ण बिस्कुटों के क्षेत्र में परिचित नाम "असोका ग्लुकोज़ मिल्क बिस्कुट" जिनका उत्पादन स्वचालित जर्मन मशीनों से हुआ है।

असोका बिस्कुट वर्कस, हैदराबाद

मित्र-संप्राप्ति